नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

बिगुल

मासिक समाचार पत्र • वर्ष 4 अंक 1
फरवरी-मार्च 2002 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ

सोचो मजदूर साथियो! सोचो मेहनतक़श भाइयो!!
यह विनाशलीला किनके हक में है? कौन इसे रच रहे हैं?
यह देश को कहां ले जायेगा?

गुजरात में नरसंहार

सम्पादकीय

गुजरात में लगी साम्प्रदायिक दंगों की आग अभी बुझी नहीं है। लगभग एक हज़ार लोग अबतक मारे जा चुके हैं। लाखों ग़रीब, आम लोग अपना सब कुछ खोकर दर-बदर भटक रहे हैं।

सच पूछा जाये तो ये दंगे हैं ही नहीं। यह सुनियोजित नरसंहार है जिसे गुजरात की भाजपा सरकार ने संगठित किया है। गोधरा में कुछ मुट्ठी भर जुनूनी बदमाशों द्वारा साबरमती ट्रेन पर हमले और हत्याकाण्ड की जो जवाबी कार्रवाई पूरे गुजरात में हुई है उसके पीछे सीधे-सीधे राज्य-मशीनरी का हाथ है, अखबारों की रिपोर्टिंग से भी यह चीज़ एकदम साफ होकर सामने आई है। सैकड़ों बेगुनाह सड़कों पर ज़िन्दा जलाये जाते रहे और गुजरात के मुख्यमंत्री इसे मुस्कुराते हुए "गोधरा काण्ड की स्वाभाविक प्रतिक्रिया" बताते रहे। संघ परिवार के नेता और मुखपत्र भड़काऊ बयान जारी करते रहे, प्रधानमंत्री बीच-बचाव की नकली शान्तिवादी मुद्रा अपनाए हुए फासिस्ट धर्मोन्मादियों को संरक्षण देते रहे और राज्य की पुलिस न केवल मूक द्रष्टा बनी रही, बल्कि दंगाइयों को खुला संरक्षण देती रही। चुनावों में अपनी हालत पतली देखकर अयोध्या में एक बार फिर मन्दिर-निर्माण के जिस जुनून को हवा दिया गया है, उसके विनाशकारी नतीजों की पहली किश्त गोधरा काण्ड के बाद सामने आ गयी है। आम ग़रीबों की एकता को तोड़ने वाले और उन पर कहर बरपा करने वाले विनाश का जो सिलसिला शुरू हुआ है, वह आगे भी जारी रहेगा क्योंकि मजहबी कट्टरपंथी इसी आग पर सिंकी रोटियां खाते हैं और व्यापक आम जनता की पूंजीवादी लूट-खसोट के खिलाफ बन रही एकजुटता को तोड़ने का यह तरीका हुकूमती जमातों के लिए भी सबसे मुफ़ीद है।

ग़ौरतलब है कि चार राज्यों के विधानसभा चुनावों में भाजपा-गठबंधन की करारी हार के ठीक बाद यह बर्बर नरसंहार रचा गया। आखिर मन्दिर-निर्माण के मसले को एक बार फिर, ठीक उसी समय क्यों तूल दिया गया जब यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि आने वाले चुनावों में भाजपा की बुरी गत होने वाली है? तबाही लाने वाली जनविरोधी नीतियों पर पर्दा डालने के लिए भाजपा को एक बार फिर धर्मोन्माद का खूनी खेल खेलना ही था! कथित 'हिन्दू वोट बैंक' को बिखरने से बचाने के लिए उसके सामने यही एक रास्ता था। और केवल भाजपा ही नहीं, बल्कि यह पूरे शासक वर्ग के हित में था कि उदारीकरण-निजीकरण की तबाही के खिलाफ इकट्ठा हो रहे जनता के गुस्से को व्यापक जनान्दोलनों में फूट पड़ने से रोकने के लिए राष्ट्रीय राजनीति के केन्द्रीय एजेण्डे पर एक बार फिर मन्दिर-मस्जिद और हिन्दू-मुस्लिम के सवाल को ला दिया जाये। यह और भी ज़रूरी था क्योंकि तहलका-काण्ड के बाद ताबूतों की खरीद में हुए घोटाले ने "भाजपाई देशभक्ति" के अन्धराष्ट्रवादी बैलून को पंक्चर कर दिया था। साथ ही, आम जमता भी अब यह समझने लगी थी कि आतंकवाद विरोधी अन्तरराष्ट्रीय मोर्चेबन्दी के नाम पर वाजपेयी सरकार सीधे-सीधे अमेरिकी साम्राज्यवादियों के गन्दे खेल का मोहरा बन गयी है। भारतीय शासक वर्ग आर्थिक मामलों में पूरी तरह साम्राज्यवादियों के आगे घुटने टेकने के बाद अब अपनी विदेश-नीति भी उनके इशारे पर तय करने लगा है और दक्षिण एशिया में उनके लठैत की भूमिका निभा रहा है – यह घिनौनी सच्चाई अब पर्दे के पीछे ओझल नहीं रह गया था। इसलिए शासकों के लिए ज़रूरी हो गया था कि एक बार फिर मन्दिर-मस्जिद विवाद के नाग को पिटारी से बाहर निकाला जाये।

(पेज 6 पर जारी)

मज़दूर आन्दोलन की एकता के लिए ट्रेड यूनियनों के नेतृत्व पर मज़दूर आबादी का बढ़ता दबाव
मज़दूर आन्दोलन फिर सरगर्म हो रहा है!

देश भर के मज़दूर अब शिद्दत से इस बात को महसूस करने लगे हैं कि पूंजीवादी पार्टियों और चुनावी वामपंथियों से जुड़ी अलग-अलग ट्रेड यूनियनों में बंट जाने से सर्वहारा वर्ग की एकजुट ताकत किस कदर कमजोर हुई हैं। उदारीकरण-उन्माद में पगलाई सरकार लगातार घातक मज़दूर-विरोधी नीतियों को लागू करती जा रही है और खण्ड-खण्ड में बंटा मज़दूर आन्दोलन पिछले बारह वर्षों के भीतर रस्मी विरोध से अधिक कुछ भी नहीं कर सका है।

पिछले कुछ दिनों से सभी यूनियनों की नेताशाही पर मज़दूरों का दबाव लगातार बढ़ता रहा है कि वे अपने-अपने आका चुनावी दलों की गोटी लाल करने के मक़सद से मज़दूरों को बांटना और इस्तेमाल करना बन्द करें। श्रमिक-विरोधी नीतियों पर धुआंधार अमल के भयंकर नतीजों को देखते हुए भाजपा-सम्बद्ध और कांग्रेस-समर्थक यूनियनों के नेता भी, रस्मी तौर पर ही सही, लेकिन उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों का विरोध करने पर बाध्य हुए हैं। हालांकि तस्वीर का दूसरा पहलू यह है कि आन्दोलन को आगे बढ़ाने के बजाय रस्म-अदायगी तक सीमित रहकर ये लगातार शासक वर्गों की मदद करते रहे हैं और मज़दूरों का मनोबल तोड़ते रहे हैं।

घोर मज़दूर-विरोधी श्रम-सुधारों

(पेज 6 पर जारी)

भीतर के पन्नों पर

1. कंडेला किसान गोली काण्ड की अगली कड़ी है खानक काण्ड -पृ. 3
2. नोएडा के उजरती गुलामों की ज़िंदगी का एक पहलू - पृ. 4
3. मजदूर आन्दोलन को नई धार देने के लिए ट्रेड यूनियनों में जनवाद का बहाल करो -पृ. 5
4. चौटाला सरकार के नौकरशाहों का आतंकराज -पृ. 5
5. पार्टी की बुनियादी समझदारी - पृ. 7
6. सिलेसियाई बुनकरों का गीत -पृ. 10

बजट- 2002: अब जेब नहीं गला काटने की पारी

ललित सती

पूंजीवादी राजनीति की दुनिया और अपराधों की दुनिया के बीच सुधी-सयाने बहुत अधिक समानताएं देखते हैं। लेकिन हमारे ख्याल से इनके बीच कुछ भिन्नताएं भी हैं। अपराध की दुनिया में प्राय: जो सेंध मारता है वह सेंध ही मारता रह जाता है, जो जेब काटता है वह जेब ही काटता रह जाता है और जो गला काटता है, वह गला ही काटता है (अलबत्ता यह जरूर होता है कि छोटा जेबकतरा बड़ा जेबकतरा, छोटा कतली बड़ा कतली और छोटा तस्कर बड़ा तस्कर बन जाता है)। लेकिन राजनीति की दुनिया में प्राय: यह होता है कि जो जेब काटने से शुरू करता है वह पूरी कमीज उतरवा लेने और गला काटने तक जा पंहुचता है।

हुकूमती जमातों के मुंशी-खजांची (जिन्हे लोग वित्तमंत्री कहते हैं) यशवंत सिन्हा की ही मिसाल लीजिये। जनाब ने इस बार संसद में अपना चौथा बजट पेश किया। पहले बजट में जनता की जेब काटी, दूसरे-तीसरे में बगल में चाकू लगाकर लूटा और अब चौथे बजट में सीधे गरीबों का गला काटने पर ही उतारू हो गये। दोष उन्हें भी भला क्यों दें ? वे तो मालिक थैलीशाहों के महज एक प्यादे हैं। सरकार उन्हीं पूंजीपतियों की "मैनेजमेण्ट कमेटी" है और वे तो महज उसके एक अमले हैं। इसबार बजट पेश करने से पहले चूंकि विधान सभा चुनाव भी बीत चुके थे इसलिए कड़वी गोली को लोकलुभावन शिगूफेबाजी के चाशनी में भी लपेटने की जरूरत नहीं समझी। पकड़ा और सीधे हलक के नीचे उतार दिया!

बजट ने घोषित तौर पर उन सभी को लाभ पंहुचाया है (1) जो विदेशों में डालर-पौण्ड कमाते हैं (2) जो देश में बड़े कारखानों और वित्तीय संस्थानों के मालिक हैं (3) जो मोटी तनख्वाहें उठाकर और काली कमाई करके शेयर खरीदते हैं या जमीन-जायदाद में पैसा लगाते हैं (4) जो बड़े व्यापारी हैं और (5) जो बड़े किसान हैं और इन सबसे अधिक लाभ पंहुचाया गया है (6) साम्राज्यवादी देशों को और

(पेज 10 पर जारी)

बजा बिगुल मेहनतक़श जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

भारतीय अर्थव्यवस्था पर डब्ल्यू.टी.ओ. के कसते शिकंजे के खिलाफ एकता का आह्वान

रामनगर (कुमाऊं प्रतिनिधि) साम्राज्यवादी वैश्वीकरण विरोधी मंच (फैग) के राज्यस्तरीय सम्मेलन में विश्व व्यापार संगठन के बढ़ते शिकंजे पर चिंता व्यक्त करते हुए पूंजीवाद के खिलाफ लामबंद होने की आवश्यकता जताई गई। सम्मेलन के समापन पर नगर में रैली भी निकाली गई।

सम्मेलन की अध्यक्षता ए.आई.पी.आर.एफ. के राष्ट्रीय अध्यक्ष दर्शनपाल ने की।

सम्मेलन का संचालन करते हुए बिगुल मज़दूर दस्ता के मुकुल ने कहा कि भूमंडलीकरण की आड़ में विश्व व्यापार संगठन और विश्व बैंक द्वारा कमजोर देशों की लूट के खिलाफ संघर्ष की आवश्यक्ता के चलते ही विभिन्न प्रगतिशील ताकतों द्वारा 13 सितंबर, 2001 को दिल्ली में अखिल भारतीय स्तर पर 'फैग' का गठन किया गया। भूमंडलीकरण की आड़ में गरीब देशों में साम्राज्यवादी ताकतों का शिकंजा विश्व व्यापार संगठन द्वारा फैलाया जा रहा है। ऐसे दौर में जब सभी साम्राज्यवादी ताकतें तथा तीसरी दुनिया का पूंजीपति वर्ग खुली लूट के लिए चौपाल लगाए बैठा हो, तब सभी प्रगतिशील ताकतों को एकजुट कर देशी-विदेशी लूट के खिलाफ संघर्ष करने की आवश्यकता है।

मज़दूर-किसान संघर्ष समिति के प्रताप सिंह ने कहा कि 'फैग' कृषि में घटते सरकारी निवेश, विश्व व्यापार के दबाव में की जा रही छंटनी, घटते रोजगार, शिक्षा के बाजारीकरण, घटती सब्सिडी, ट्रेड यूनियनों पर बढ़ते पूंजीवादी शिकंजे, श्रम कानूनों में हो रहे श्रमिक विरोधी परिवर्तनों, एफ.सी.आई. द्वारा अनाज न खरीदने, निरंतर किया जा रहा कृषि आयात, उत्तराखण्ड में बढ़ते पुलिसिया दमन तथा टिहरी विस्थापितों के अनुष्ठानिक पुनर्वास का विरोध करता है।

क्रान्तिकारी लोक अधिकार संगठन के रमेश तिवारी ने 'विश्व व्यापार संगठन की दोहा वार्ता का भारत पर प्रभाव' शीर्षक से पर्चा प्रस्तुत करते हुए कहा कि विश्व व्यापार संगठन निजाम की नीतियों से जीवनरक्षक दवाएं महंगी होती जा रही हैं। कमजोर देशों की कृषि तथा अर्थव्यवस्था लगातार ढहती जा रही है। कल्याणकारी राज्य की प्रस्थापना खत्म होती जा रही है तथा राज्य अपनी नागरिक जिम्मेदारियों से मुंह मोड़ रहा है।

'उत्तराखंड में बढ़ता साम्राज्यवादी हस्तक्षेप' शीर्षक से प्रस्तुत दूसरे पर्चे में उत्तराखंड जन संग्राम मंच के नवीन ने कहा कि नई सरकार भी कुछ नया नहीं करने जा रही है, बल्कि यहां की प्राकृतिक संपदा को साम्राज्यवादी देशों को लुटाएगी। इनके ही प्रभाव से उत्तराखंड के उद्योग मृतप्राय हो चुके हैं। यहां के खनिज, उद्योग, दवा कंपनियां, एच.एम.टी. घड़ी कारखाना, नैना सेमी कंडक्टर, श्रीराम होंडा तथा हरिद्वार की बी.एच.ई.एल. तक बिक चुके हैं या फिर बिकने की बाट जोह रहे हैं। आज उत्तराखंड में तेरह हजार स्वयंसेवी संगठन कार्य कर रहे हैं, जो विश्व बैंक द्वारा वित्त प्रेषित हैं। ये जनता की क्रांतिकारी चेतना को कुंद करते हैं तथा समाज के वास्तविक संघर्षों को पीछे धकेल रहे हैं। यह सब साम्राज्यवादी शासकों की योजना के तहत हो रहा है।

सम्मेलन में पढ़ा गया तीसरा पर्चा 'पोटो' पर था। मुकुल ने इसे पढ़ते हुए कहा कि आतंकवाद विरोधी अभियान के नाम पर जनता के अधिकारों को कुचलने के लिए ऐसा कानून बनाया जा रहा है। यह कानून पहले से ही निरंकुश पुलिस को और ज्यादा अधिकार देता है तथा जवाबदेही से मुक्ति, ताकि पुलिस और आसानी से अपना दमनचक्र चला सके।

सम्मेलन में सात प्रस्ताव भी पारित किए गए। इनमें श्रम कानूनों में हो रहे परिवर्तनों के विरोध में उत्तराखंड में गैर पर्वतीय लोगों के अधिकार के लिए, आम जन विरोधी बजट के खिलाफ, स्त्रियों के अधिकार के लिए, उत्तराखंड में बढ़ते पुलिस दमन के विरोध, खेत मज़दूरों के लिए भी श्रम कानून बनाए जाने तथा गुजरात में विश्व हिंदू परिषद जैसे संगठनों द्वारा धार्मिक उन्माद भड़काकर फैलाई जा रही साम्प्रदायिक हिंसा के खिलाफ पारित प्रस्ताव शामिल हैं।

सम्मेलन के समापन पर उत्तराखंड के विभिन्न स्थानों से आए प्रतिनिधियों ने नगर में रैली निकाली। 'विश्व व्यापार संगठन मुर्दाबाद', 'इंकलाब जिंदाबाद' आदि नारे लगाते हुए रैली नगर के प्रमुख मार्गों से होते हुए तहसील कार्यालय पर सभा में परिवर्तित हो गई। वक्ताओं ने आवाम का साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में व्यापक भागीदारी के लिए आह्वान किया। गुजरात में साम्प्रदायिक उन्माद पर क्षोभ प्रकट करते हुए विश्व हिन्दू परिषद, बजरंग दल जैसे फासिस्ट संगठनों पर प्रतिबंध लगाने व गुजरात के मुख्यमंत्री व प्रधानमंत्री से इस्तीफे की मांग की गयी।

आपस की बात

मज़दूरों की गाढ़ी कमाई हड़प जाते हैं मालिक

औद्योगिक शहर लुधियाना के हम्बज में गौसपुर पिण्ड स्थित जय दुर्गा पेपर मिल है। इस मिल में लगभग 100 वर्कर काम करते हैं, जिसमें इस समय लगभग 40 वर्कर मौजूद हैं। इनके अधिकांश मज़दूर बंगाल के हैं और बिना पढ़े-लिखे हैं। पक्के रजिस्टर पर किसी का भी नाम नहीं है। इन मज़दूरों को किसी प्रकार की छुट्टी, यहां तक कि साप्ताहिक छुट्टी भी नहीं मिलती है। इनकी तनख्वाह 1600 से 2300 के बीच है। इन्हें सुबह आठ बजे से रात दस बजे तक काम करना पड़ता है। इस मिल में चार ठेकेदार हैं।

यहां पर उस समय हंगामा खड़ा हो गया, जब मज़दूर अपना पांच-पांच महीने का बकाया वेतन मांगने मिल के बाबूजी के पास गये। बाबूजी यानी मालिक बोला कि किसी का कोई रुपया उसके पास नहीं है, सबको दे दिया है। बाबूजी को थोड़ी सी भी दया नहीं आई। मज़दूरों का लाखों रुपया हड़प गये। 20 मज़दूर 27 नवम्बर से काम पर नहीं गये। इसके बाद मालिक और उसके पालतू गुण्डे इन मज़दूरों को तंग करने लगे।

जब इस बात का पता मोल्ड एण्ड स्टील वर्क्स यूनियन तथा इन्कलाबी केन्द्र, पंजाब के नेताओं को लगा तो वे इन मज़दूरों को साथ लेकर डी.सी. से मिले। डी.सी. ने लेबर आफिस से सम्पर्क किया। इसके बाद ये मज़दूर नेता लेबर इन्स्पेक्टर को साथ लेकर मिल मालिक से मिले। काफी गरमागरमी के बाद मालिक ने अस्सी हजार रुपये दो किश्तों में देने का वादा किया। पहली किश्त में छत्तीस हजार रुपये तो दे दिये। दूसरी किश्त के लिए उसने बहुत दौड़ाया। अभी भी लाखों रुपया मालिक ने दबा रखा है। एक मज़दूर तो ऐसा है, जिसकी अठारह महीने की तनख्वाह नहीं मिली थी, लेकिन वह डर के मारे मांगने नहीं जा पाता था।

यहीं पर ए.एस.टी. पेपर मिल है, जहां कार्यरत 40 मज़दूरों के बकाया चौरानबे हजार रुपये पिछले महीने में दो किश्तों में दिलवाये गये हैं।

-ए.के. सिंह
लुधियाना

मैं 'बिगुल' अखबार नियमित रूप से लेता हूं और पढ़ता हूं। हमारा पसन्दीदा पेपर है, मज़दूरों को चेतन करना और जागरूक करना जरूरी है। मज़दूरों को सही रास्ता दिखलाने वाला उनका अपनाअखबार है 'बिगुल'। यह अखबार पूरे देश में फैल जाय और पूंजीपतियों के खिलाफ बिगुल बजा दे। लगता है कि वह दिन दूर नहीं है, जब मज़दूर अपना रास्ता कायम कर लेगा।

संपादक जी, मैं आपके ऊपर दबाव डालूंगा और शिकायत भी करूंगा कि अखबार बहुत देर से आता है। ग्यारहवें महीने का अखबार बारहवें महीने में मिल पाता है। इसके ऊपर ध्यान दिया जाय।

विक्रम सिंह, लुधियाना

जंग

कहीं जिंदगी की जंग
कहीं समय की जंग
लड़ रहा हूं हर कदम जंग
मगर फिर भी न हुआ मैं तंग
शायद जिंदगी हो गयी
हो मगर मैं नहीं
मैं भी हो सकता हूं
अभी यूं इस तरह नहीं
हर मोर्चे पर हाथ आती है निराशा
कहीं पर जीतने की फिर भी है आशा
एक कदम टूट कर बिखरता हूं
एक कदम फिर मैं संभलता हूं
कुछ खोकर कुछ पाने के प्रयास
हर अगले मोर्चे पर जीतने की आस में
मेरी जिंदगी और समय से जंग जारी है
इस हार में हुई जीत शायद हमारी है।

शमशीर कुमार सोनकर

लोगों को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए वर्ग-चेतना की जरूरत है। गरीब मेहनतकश व किसानों को स्पष्ट समझा देना चाहिए कि तुम्हारे असली दुश्मन पूंजीपति हैं, इसलिए तुम्हें इनके हथकंडों से बचकर रहना चाहिए और इनके हत्थे चढ़ कुछ न करना चाहिए। संसार के सभी गरीबों के, चाहे वे किसी भी जाति, रंग, धर्म या राष्ट्र के हों, अधिकार एक ही हैं। तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम धर्म, रंग नस्ल और राष्ट्रीयता व देश के भेदभाव मिटाकर एकजुट हो जाओ और सरकार की ताकत अपने हाथ में लेने का यत्न करो।...

-भगत सिंह
(साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज)

बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को यह नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा ही कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

बिगुल यहां से प्राप्त करें

- शहीद पुस्तकालय, डा. दूधनाथ, जनगण सेवा सदन, **मर्यादपुर**, मऊ
- मौर्या बुक स्टाल, सआदतपुरा (निकट रोडवेज), मऊनाथभंजन, **मऊ**
- जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर**
- विजय इन्फारमेशन सेन्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर**
- विश्वनाथ मिश्र, नेशनल पी.जी. कालेज, **बड़हलगंज**, गोरखपुर
- जनचेतना, डी 68, निशातनगर, **लखनऊ**
- जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ**, (शाम 5 से 8-30)
- राहुल फाउण्डेशन, 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, **लखनऊ**
- विमल कुमार, बुक स्टाल, निकट नीलगिरि काम्प्लेक्स, ए ब्लाक, इंदिरानगर, **लखनऊ**
- रामपाल सिंह, भारतीय जीवन बीमा निगम, आवास विकास, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर)
- रवीन्द्र कुमार, भारतीय जीवन बीमा निगम, शाखा कार्यालय, पन्तनगर
- प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, विश्वनाथ मंदिर गेट, बी.एच.यू. **वाराणसी**
- राजीव वर्मा, स्टूडेण्ट एजुकेशनल सेंटर, मैनाताली (पुलिस चौकी के पास), मुगलसराय, जिला-चन्दौली
- राजेन्द्र प्रसाद, रेणु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, **रेणुकूट**, सोनभद्र
- सत्यम वर्मा, 81, समाचार अपार्टमेंट, मयूर विहार-एक, **दिल्ली**
- ललित सती, एल.आई.सी., फैज रोड शाखा, **दिल्ली**
- नई किरण पुस्तक भंडार, एफ-56, हरकेश नगर, ओखला, नई दिल्ली
- डी. के. सचान, एस.एच.- 272, शास्त्रीनगर **गाजियाबाद**
- सुनील कुमार सिंह, सेक्टर-12 बी, 3159, **बोकारो** इस्पातनगर, **बोकारो**
- गणपतलाल, ग्राम काजी रसूलपुर, पो.-तेघड़ा, **बेगूसराय**
- पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना**
- समकालीन प्रकाशन (प्रा.) लि. पुस्तक बिक्री केन्द्र, आज़ाद मार्केट, पीरमुहानी, **पटना**
- विमर्श, 22, स्वास्तिक काम्प्लेक्स, रसल चौक ,जबलपुर
- नरभिन्दर सिंह, द्वारा डा. सुखदेव हुन्दल, ग्रा/पो. **सन्तनगर**, जिला-सिरसा
- पंकज, प्लाट नं. 33, सेक्टर-15, सोनीपत (हरियाणा)
- सुखविंदर द्वारा कॉ0 दशरथ लाल, मकान नं 14, लेबर कॉलोनी, गिल रोड, लुधियाना (पंजाब)
- राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मंदिर, प्रधान नगर, सिलीगुड़ी, **दार्जीलिंग**
- बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता**
- शर्मा बुक स्टाल, थाना रोड, चराली, **तिनसुकिया** *नेपाल*
- विश्व नेपाली पुस्तक सदन, श्रवनपथ, बुटवल, रुपनदेई, **नेपाल**
- विशाल पुस्तक सदन, बिजुवार बाजार, प्यूठान राप्ती अंचल
- विशाल पुस्तक पसल, अस्पताल लाइन, बुटवल, **लुम्बिनी**, नेपाल
- लक्ष्मी नारायण मिश्र, 853, हिरनमगरी, सेक्टर 4, पूजानगर, **उदयपुर** (राज.)

कंडेला किसान गोली काण्ड की अगली कड़ी है खानक काण्ड

हरियाणा

पंकज

मुनाफाखोरों की हवस इस कदर बढ़ चुकी है कि वे अपने मुनाफे के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार हैं। वे मज़दूर के मुंह का निवाला भी छीन लेना चाहते हैं। वे जंगल, जमीन, पहाड़, हवा, पानी सबको अपनी बपौती समझते हैं। उनकी लूट और डाकेजनी का यदि जनता विरोध करती है, तो वे गुण्डागर्दी पर उतर आते हैं। सरकार आज इन्हीं मुनाफाखोरों के हितों के अनुसार जनविरोधी नीतियां बना रही है और उन्हें लाठी-गोली के दम पर लागू करा रही है।

खानक पहाड़ खान इलाके के मेहनतकश इसबात को बखूबी समझ सकते हैं कि ग़रीब की रोजी-रोटी पर लात मारने के लिए मुनाफाखोर, सरकार, पुलिस-प्रशासन कैसे एकजुट है। हरियाणा में भिवानी जिले के तोशाम उपखण्ड में स्थित है – खानक पहाड़, जहां पर पत्थर की खानें हैं। इसी खानक पहाड़ के इर्द-गिर्द के करीब तीस गांव के निवासियों पर फरवरी के पहले सप्ताह में पुलिसिया कहर बरपा हुआ है। अभी भी खानक पहाड़ खान इलाके में पुलिस और ठेकेदारों के गुण्डों का भय व्याप्त है। ग्रामीणों का कसूर यह था कि वे पहाड़ की अवैध नाकेबन्दी और जबरन वसूली का विरोध कर रहे थे।

खानक पहाड़ों पर दस प्लाट है, जहां खनन का काम होता है। बरसों से इन पहाड़ों के आसपास के हजारों ग्रामीण इन खानों से अपनी आजीविका चला रहे हैं। इन ग्रामीणों के पूर्वजों ने ही इन खानों को खनन लायक बनाया था। वर्तमान घटनाक्रम से पहले सरकारी खनन विभाग लीज पर इन खानों को उठाता था और राज्य सरकार तैयार माल पर कर वसूलती थी। लीज की राशि का भुगतान ग्रामीण मिलकर करते थे। ग्रामीणों ने पहाड़ खान मज़दूर यूनियन बना रखी है। यूनियन लीज राशि का भुगतान करने से लेकर अन्य कागजी कार्रवाइयां ग्रामीणों की तरफ से करती रही है।

खानक क्षेत्र का पत्थर उम्दा किस्म का है। इसीलिए पिछले कुछ समय से मुनाफाखोरों की गिद्ध दृष्टि खानक पहाड़ पर लगी हुई थी। वे चाहते थे कि धनबल से ग्रामीणों को इन खानों से बेदखल कर दिया जाये। उनकी इस नाजायज चाहत को पूरा करने के लिए सरकार ने एक खनन नीति खानक पर थोपने की अबसे चार वर्ष पूर्व भी एक कोशिश की थी, लेकिन ग्रामीणों के एकजुट विरोध और महीनों चले संघर्ष ने इस कोशिश को धूल चटा दिया था।

निजीकरण के इस दौर में जब चुनावबाज पार्टियों में अपने को पूंजीपतियों का सबसे वफादार सेवक सिद्ध करने की होड़ लगी हुई है, तो हरियाणा के "जन प्रतिनिधि" भी क्यों पीछे रहते? चौटाला सरकार ने लगभग तीन माह पूर्व खानक पहाड़ खान क्षेत्र के दस में से सात प्लाटों की खुली बोली लगाने का फैसला किया। जाहिर सी बात है कि इस बोली में ग्रामीण नहीं टिक सकते थे। नई नीति बनी भी इसीलिए कि ग़रीब के पेट पर लात मारकर खानक पहाड़ की अकूत सम्पदा को सेठों की तिजोरियों में डाला जाये।

उच्चतम बोली लगाने वाले ठेकेदारों की अभी खनन विभाग के साथ अनुबंध की कागजी कार्यवाई पूरी भी नहीं हो पायी थी कि ठेकेदारों ने पूरे खान इलाके के चारों तरफ अवैध नाकेबन्दी कर दी। उन्होंने रायल्टी के लिए अवैध वसूली शुरू कर दी। ठेकेदारों द्वारा पूरे इलाके की नाकेबन्दी का विरोध होना स्वाभाविक था, क्योंकि अभी भी तीन प्लाटों की लीज पहाड़ खान मज़दूर यूनियन द्वारा अदा की गयी थी। ठेकेदारों ने इन तीन प्लाटों पर कब्जे के लिए यूनियन पर कब्जे की साजिश रची।

खान मज़दूरों ने करीब डेढ़ माह तक प्रशासन से अपना विरोध दर्ज कराने से लेकर धरना-प्रदर्शन किया। लेकिन प्रशासन ने कोई कार्रवाई नहीं की। पूंजी के चाकरों को खामोश रहना था और वे खामोश रहे। मज़दूरों ने 29 जनवरी को भिवानी जिला उपायुक्त के समक्ष प्रदर्शन किया और ज्ञापन दिया। फिर भी प्रशासन ठेकेदारों की अवैध नाकाबन्दी और जोर-जबर्दस्ती पर काठ का उल्लू बना रहा।

आखिरकार 2 फरवरी को ग्रामीणों का सब्र का बांध टूटा और उन्होंने स्वयं अवैध नाके हटाने शुरू कर दिये। आखिर यह उनके जीवन-मरण का प्रश्न बना हुआ था। ठेकेदारों की गुण्डागर्दी और सरकारी हुक्मरानों की जालिम नीतियां उन्हें तबाह कर रही थीं। जब ग्रामीणों ने अवैध नाकों को हटाने का न्यायसंगत काम शुरू किया तो पुलिस-प्रशासन का चौकन्ना होना लाजिमी था। उनके लिए तो ग़रीबों की हिम्मत इतनी बढ़ गई थी कि वे हक और न्याय की बातें करने लगे। इन मज़दूरों को सबक सिखाकर ही कानून व्यवस्था को बनाये रखा जा सकता था।

2 फरवरी से खानक क्षेत्र को पुलिस छावनी में तब्दील कर दिया गया। पुलिस ने आन्दोलनकारियों के परिवारों में घुसकर मारपीट की। बच्चों, महिलाओं और वृद्धों तक को नहीं बख्शा। पुलिस के वहशीपन के मुकाबले में कुछ ग्रामीणों ने हिम्मत की और पहाड़ियों पर चढ़कर पुलिस पर पथराव किया। पुलिस और मज़दूरों के इस टकराव के बाद तो पुलिस का कहर करीब तीन दर्जन गांवों पर टूट पड़ा।

पुलिस ने रात के अंधेरे में ग्रामीणों के घरों में जाकर मारपीट की। दरवाजे तोड़कर घरों से मज़दूरों को उठाया। यहां तक कि राहगीरों और दुकानदारों को पुलिस के कोप का शिकार होना पड़ा। पुलिस करीब तीन दर्जन लोगों को पकड़ कर ले गयी, जिसमें कई महिलाएं शामिल हैं। तीन दिन चले पुलिस के ताण्डव ने अंग्रेजी हुकूमत के जोरो-जुल्म की याद दिला दी। खानक से सटा गांव बागनवाला पुलिसिया जुल्म का सबसे ज्यादा शिकार हुआ।

पुलिस ने क्षेत्र में धारा 144 लगाकर और फ्लैग मार्च कर दहशत पैदा की। ऐसा लग रहा था जैसे दंगाइयों से निपटने के लिए पुलिस ने मोर्चा सम्हाल रखा हो। न सिर्फ पुलिस बल्कि ठेकेदारों के गुण्डों ने भी यूनियन नेताओं को धमकियां दीं और खौफनाक हालात बनाये। तीन दिन तो क्षेत्र में अघोषित कर्फ्यू रहा।

इस पूरे प्रकरण में यह साफ हो गया कि पुलिस-प्रशासन और सरकार ठेकेदारों के पक्ष में खड़े हैं। कुछ ठेकेदारों, दलालों, धन्नासेठों की मुनाफे की भूख को शान्त करने के लिए इन्हें हजारों मेहनतकश परिवारों को तबाह-बर्बाद करना मंजूर है।

मज़दूरों के जीवन-मरण का प्रश्न होने के कारण संघर्ष होना ही था, लेकिन यूनियन नेतृत्व स्थितियों को भांपकर एक लम्बे संघर्ष की रणनीति न बना सका। जिससे मज़दूर सड़कों पर उतरे, पुलिस से टक्कर भी ली और दमन भी झेला। किन्तु यदि संघर्ष की पहले से तैयारी होती और परिपक्व नेतृत्व होता तो स्थितियां कुछ और होतीं।

इस घटना के पन्द्रह दिन बाद 45 गांवों की पंचायत ने आन्दोलन को समर्थन देने की घोषणा की है और मांग की है कि अवैध नाकों और लूट को खत्म किया जाय।

यूनियन और पंचायत की मांगों पर सरकार का रुख क्या होगा, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि खानक मामले में कितनी व्यापक एकजुटता बनती है और कितना जनदबाव बनता है। क्योंकि खानक को देश भर में घट रही ऐसी अन्य घटनाओं से जोड़ कर देखें तो यह साफ दिखता है कि लुटेरे एकजुट होकर घात लगाकर मज़दूर वर्ग के अलग-अलग हिस्से पर खतरनाक प्रहार कर रहे हैं। यह भी स्पष्ट हो चुका है कि मज़दूर वर्ग को भी अपनी सेना को मुकाबले के लिए तैयार करना होगा और इसके सेनापति चुनावबाजों के दुमछल्ले तो कतई नहीं हो सकते।

सिर न झुकाने पर सवर्णों द्वारा दलित बच्ची की पीटकर हत्या

इस अमानवीय सामाजिक ढांचे को तोड़ना ही होगा

दशवंत

3 जनवरी को मध्य प्रदेश के शिवपुरी जिले के रामगढ़ गांव की पांच वर्षीय अबोध बच्ची सविता की नृशंस तरीके से पीट-पीटकर हत्या कर दी गयी। बच्ची का कसूर यह था कि वह दलित थी और गांव के रीति-रिवाज के अनुसार वहां से गुजरने वाले सवर्णों के सम्मान में उसने सिर नहीं झुकाया।

यह अमानुषिक घटना उस इलाके में घटी जहां सदियों पुरानी यह परम्परा चली आ रही है कि सवर्णों के वहां से गुजरने पर दलित आबादी अपना सिर झुका लेती है। घटना के दिन शाम के वक्त दलित कल्लू का पुत्र आत्मा सिंह और उसकी बहन सविता खेल रहे थे। उसी वक्त सवर्ण वीर सिंह और उसका भाई हल्का कल्लू जाटव के झोपड़ी के पास से गुजर रहे थे। खेल में मशगूल बच्चों को उनका ध्यान नहीं रहा और उन्होंने सिर नहीं नवाजा। सवर्णों का इतना बड़ा अपमान ! उनकी आंखों में खून उतर आया और ये हत्यारे-दोनों बच्चों की निर्ममतापूर्वक पिटाई करने लगे। पिटते-पिटते दोनों बच्चे बेदम होकर गिर पड़े और बेहोश हो गये। अंदरूनी चोटों की वजह से सविता ने दम तोड़ दिया जबकि आत्मा जीवन-मरण का संघर्ष कर रहा है।

बच्चों की चीख-पुकार सुनकर पूरा गांव एकत्रित हो गया लेकिन सब भयभीत मूकदर्शक बने खड़े रहे। इन सवर्णों का आतंक इतना गहरा था कि गांव वाले पुलिस रिपोर्ट तक दर्ज करने से घबरा गये।

यह घटना कोई अपवाद नहीं है बल्कि आज भी देश के तमाम पिछड़े ऐसे गांव हैं जहां ऐसी अमानुषिक घटनाएं देखने को मिल जाएंगी। कहीं सविता सवर्णों की बलि वेदी पर चढ़ जाती हैं तो कहीं किसी दलित स्त्री को निर्वस्त्र करके गांव की सड़कों पर घुमाया जाता है।

दरअसल, इस आधुनिक समाज में अति बर्बर प्राचीन घटनाओं की जड़ें, इस मुल्क के प्राचीन ऐतिहासिक सांस्कृतिक मूल्यों, मान्यताओं में हैं जिसने आधुनिक पूंजीवादी निरंकुशता से सहमेल स्थापित कर लिया है। किसानी अर्थव्यवस्था वाले ग्रामीण इलाकों में जो बर्बर निरंकुश स्वेच्छाचारी जातिवादी मूल्य सदियों से जड़े जमाये हुए हैं, उन्हें पूंजी की सत्ता ने एक नया आधार मुहैय्या कराया है और मजबूती दी है।

एक तो भारत में भूस्वामित्व की व्यवस्था में बदलाव एकदम धीमा रहा है। यहां का पूंजीवाद विकास की नैसर्गिक प्रक्रिया से जन्म लेने की जगह औपनिवेशिक गुलामी के दौर में साम्राज्यवाद की कोख से जन्मा और पला बढ़ा। यह विकलांग किन्तु जनवाद विरोधी बर्बर बालक है इसीलिए इसने पूंजीवादी से पहले समाज के तमाम निरंकुश स्वेच्छाधारी मूल्यों-मान्यताओं को ज्यों का त्यों अपना लिया।

आजादी के बाद इस देश की विकलांग पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा वितरण के सवाल को क्रांतिकारी तरीके से हल न करने के कारण स्वामित्व का हस्तान्तरण भी स्वाभाविक गति से नहीं हो सका। सामन्ती भूस्वामियों में से बहुतों ने अपने को पूंजीवादी भूस्वामी के रूप में तब्दील कर लिया। जिनके पास सामन्ती मूल्य-मान्यताएं ढांचे के भीतर ही मौजूद रहीं। मध्यम और कुछ दलित जातियों में से नये कुलक पैदा भी हुए तो पूंजी की ताकत से लैस होकर वे सवर्णों से भी ज्यादा बर्बरता कर रहे हैं।

इन बर्बरताओं के साथ ही आज वित्तीय पूंजी के विश्वव्यापी वर्चस्व के दौर में फासीवादी निरंकुश सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के साथ भी इसमें सहमेल कायम कर लिया। और इस तरह इस दौर में देश के सामाजिक-सांस्कृतिक पटल पर एक तरफ तो पूंजीवादी बीमार समाज की अति आधुनिकता की नग्न संस्कृति दिखलायी देगी तो दूसरी तरफ निरंकुश प्राचीन बर्बरता की चरम पराकाष्ठा। पांच वर्षीय अबोध सविता इसी परिवेश की भेंट चढ़ गयी।

सविता जैसी घटनाओं को रोकने के लिए बर्बर स्वेच्छाचारिता के सड़ांध से बजबजाते भारतीय समाज के इस ढांचे को तोड़ना होगा। ऐसे तमाम अमानवीय कृत्यों के खिलाफ गुस्से और नफरत को जज्ब करने वाली दबी कुचली आम जनता का गुस्सा लावा का रूप लेगा और इस अमानवीय सामाजिक ढांचे को तोड़कर मानवीय मूल्यों से लबरेज एक नये समाज को जन्म देगा, जहां सविता जैसी तमाम बच्चियों की निर्मम हत्याएं नहीं होंगी बल्कि वे सीना तानकर घूम सकेंगी।

रपट "नेपाल में आपातकाल और बाहरी हस्तक्षेप" पर संगोष्ठी

अमेरिकी निगाहें अब दक्षिणी एशिया पर टिकीं

(कुमाऊं रिपोर्टर)

हल्द्वानी, 27 जनवरी। "आतंकवाद के सफाये के नाम पर अमेरिका दक्षिणी एशिया में पांव जमाने की कोशिशें कर रहा है। नेपाल में आपातकाल के नाम पर जो घृणित खेल चल रहा है वह अमेरिका द्वारा रची जा रही एक गहरी साजिश का ही परिणाम है। देश के सभी न्यायप्रिय व जनतंत्रप्रेमी नागरिकों की यह जिम्मेदारी है कि वे नेपाल में आपातकाल के तहत जनता के बर्बर दमन और वहां अमेरिकी सरपरस्ती में भारतीय हस्तक्षेप का पुरजोर विरोध करें।"

यह विचार विभिन्न संगठनों द्वारा यहां आयोजित संगोष्ठी में दिल्ली से आए वरिष्ठ पत्रकार व **'समकालीन तीसरी दुनिया'** के सम्पादक **आनन्द स्वरूप वर्मा** ने प्रकट किये। संगोष्ठी का आयोजन **'बिगुल मज़दूर दस्ता'**, **'राहुल फाउण्डेशन'**, **'अखिल भारतीय प्रगतिशील छात्र मंच'** व **'मज़दूर किसान संघर्ष समिति'** ने संयुक्त रूप से किया था। संगोष्ठी का विषय था **'नेपाल में आपातकाल और बाहरी हस्तक्षेप'**।

संगोष्ठी के मुख्य वक्ता श्री वर्मा ने कहा कि यदि पिछले एक दशक के अमेरिकी विदेश नीति पर गौर करें तो साफ नजर आएगा कि उसका 'फोकल प्वाइण्ट' दक्षिणी एशिया में शिफ्ट कर चुका है। 11 सितंबर की घटना से उसे अपनी सैनिक रणनीति को अमली जामा पहनाने का मौका मिल गया। उन्होंने कहा कि पिछले दशक के दौरान अमेरिकी विदेश विभाग, रक्षा विभाग व खुफिया एजेंसियों की रिपोर्ट देखें तो यही पता चलता है कि इन सारी रिपोर्टों में क्लिंटन से लेकर बुश तक दोनों राष्ट्रपतियों को सलाह दी गयी है कि उन्हें अपना ध्यान यूरोप से हटाकर दक्षिण एशिया पर लगाना चाहिए क्योंकि सोवियत संघ के विघटन के बाद यूरोप में अब कम्युनिज्म का कोई खतरा नहीं है। दूसरी तरफ अमेरिकी खुफिया एजेंसियां आने वाले दिनों में राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में सबसे बड़े खतरे के रूप में चीन को देख रही हैं।

विभिन्न अमेरिकी खुफिया और विदेश मंत्रालय की रिपोर्टों को प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा कि अमेरिकी निगाहें एशिया में घटने वाली तमाम घटनाओं पर टिकी हुई थीं। नेपाल में माओवादियों ने 13 फरवरी 1996 को जनयुद्ध की घोषणा की थी। पांच वर्षों के दौरान माओवादियों के बढ़े व्यापक जनाधार से अमेरिकी व भारतीय शासकों की चिन्ताएं बढ़ने लगी थीं। उधर 1966 में चीन की पहल पर 'शंघाई पांच' नामक एक ग्रुप का गठन हुआ जिसमें चीन, रूस के अलावा भूतपूर्व सोवियत संघ के तीन देश कजाकिस्तान, किर्गीज्स्तान और तजाकिस्तान शामिल थे। बाद में इसमें उजबेकिस्तान भी शामिल हो गया। तेल के विपुल भण्डार वाले इन देशों की चीन से नज़दीकी और 'आतंकवाद, पृथकतावाद और उग्रवाद के खिलाफ जारी साझा घोषणापत्र अमेरिकी चिन्ता का केन्द्रबिन्दु बन गया

(पेज 8 पर जारी)

एक्सपोर्ट गारमेण्ट कारखानों की नरक-कथा

नोएडा के उजरती गुलामों की ज़िन्दगी का एक पहलू

अजय

जिन चमचमाते हुए कपड़ों की माडलिंग बड़े-बड़े फाइव स्टार होटलों में होती है। जिन कपड़ों को पहन कर देश-विदेश के अमीरजादे इतराते नज़र आते हैं। क्या आपने कभी उन हाथों के बारे में सोचा है, जो ये कपड़े तैयार करते हैं? क्या आपने कभी उन फैक्टरियों को देखा है जहां ये कपड़े तैयार होते हैं? इन फैक्टरियों में काम करने वाले मज़दूरों की ज़िन्दगी को क्या आपने कभी नजदीक से देखा है?

आइये, हम आपको एक ऐसे औद्योगिक क्षेत्र में लेकर चलते हैं, जहां लगभग 50 फीसदी कम्पनियां 'एक्सपोर्ट गारमेण्ट' का काम करती हैं यहां पर पहनने के कपड़े से लेकर ओढ़ने-बिछाने तक का कपड़ा तैयार होता है। यह देश की राजधानी दिल्ली की नाक के नीचे बसा औद्योगिक क्षेत्र है – **नोएडा।**

जरा गौर से देखिए नोएडा में जगमगाती इमारतों, सड़कों पर फर्राटे से दौड़ रही एस्टीमों, टोयटाओं से जो समृद्धि टपकती है, उस समृद्धि के पीछे तबाही का एक बहुत बड़ा सागर है।

नोएडा में किसी भी गारमेण्ट फैक्टरी से शाम को घर वापस लौटते मज़दूरों के हुजूम पर एक नजर डालें तो पायेंगे – इनमें अधिकांश नौजवान युवक-युवतियां हैं। कई लड़के ऐसे हैं जिनकी मसें भी अभी ठीक से नहीं भीगी हैं। इस हुजूम में इक्का-दुक्का को छोड़कर ज्यादातर तीस वर्ष से नीचे की उम्र में हैं।

कम उम्र मज़दूरों के बारे में मालिकानों का तर्क रहता है कि चूंकि ये 'एक्सपोर्ट गारमेण्ट' कम्पनियां हैं, इसलिए इनमें 'स्मार्टनेस' बरकरार रहनी चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि तीस वर्ष की उम्र के बाद आप 'स्मार्ट' नहीं रह जाते, बेकार हो जाते हैं जबकि हकीकत यह है कि 'एक्सपोर्ट गारमेण्ट' कम्पनियों में काम की रफ्तार इतनी ज्यादा होती है कि बहुत लम्बी उम्र तक आप यहां काम नहीं कर सकते।

इन कारखानों में काम करने वालों में हेल्पर, चेकर धागा कटिंग करने वाले, पैकर, प्रेसमैन, स्पोर्टर, फोल्डर, रफू करने वाले, कटिंग मास्टर इत्यादि होते हैं। इन कारखानों की भर्ती प्रक्रिया को क्या आपने देखा-समझा है? आइए, आपको कारखाना गेट पर लेकर चलते हैं। गेट पर एक सूचना-पट्ट है। इस काले बोर्ड पर लिखा है – आवश्यकता है: हेल्पर-5 साल का अनुभव, आपरेटर-2-5 साल, चेकर-3-6 साल और धागा कटिंग करने वाले लड़के-लड़कियों की। कई जगह पर बेशर्मी के साथ यह लिखा हुआ मिल जायेगा – बिन ब्याही लड़कियों को प्राथमिकता।

बोर्ड देखते ही लड़के-लड़कियों की एक भीड़ गेट पर जमा हो जाती है। गार्ड उन्हें पीछे धकेलते हैं – अभी साहब नहीं आए हैं।

साहब आ गया – भरती शुरू।

"हां तो काम करना है? देखो! 1200 रुपये आठ घण्टे के मिलते हैं। काम कम होने पर 1000 रुपये हो सकते हैं। छुट्टी कोई नहीं। काम सब करना पड़ेगा। खाली नहीं रहना है। बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू कुछ नहीं। पकड़े जाने पर काम का पैसा नहीं। ओवरटाइम चार घण्टे रोज। 'नाइट शिफ्ट' भी लगेगी, लगने पर रुकना पड़ेगा। काम रहने पर यदि छुट्टी की तो हिसाब कर दिया जायेगा। 20 दिन से कम काम करने पर कोई पैसा नहीं। बोलो, करना है तो

अंदर घुसो नहीं तो भागो।"

इस तरह 'एक्सपोर्ट गारमेण्ट कम्पनी' में अर्धकुशल मज़दूरों को भरती सम्पन्न हुई।

अभी 16-17 वर्ष के कई लड़के-लड़किया एकलाइन में खड़े हैं, जिनमें से साहब को हेल्पर की भरती करनी है। साहब उनको शर्तें बताता है। एक लड़का सकपकाते हुए पूछ बैठता है:

"रविवार को छुट्टी नहीं होगी?"

"तेरे को कम सुनाई देता है क्या?" साहब जवाब देता है और कहता है "यहीं सब पता कर लो, अन्दर जाकर कोई लफड़ा नहीं।"

सवाल आता है "साब ओवरटाइम ड्योढ़ा है या दूना?"

"तू क्या अभी आसमान से टपका है, जो नहीं जानता कि ओवरटाइम कितना मिलता है? दुगुना चाहिए? तनख्वाह के बराबर मिल जाये वही बहुत है चल, तुझसे काम नहीं होगा, तू बहस बहुत करता है। जा जाकर दूसरा काम देख ले।" साहब अब दूसरे लड़के की तरफ मुखातिब हो जाता है "तू करेगा? तो चल अन्दर।"

इस तरह तीन लड़के अन्दर चले जाते हैं। चौथा हिचकिचाते हुए पूछता है "साब ओवरटाइम तो दुगुना होता है। आप तो कह रहे हैं कि तनख्वाह के बराबर, इसका तो मतलब यह हुआ कि बारह घण्टे की ड्यूटी हो गयी।"

साहब की त्योरियां चढ़ती हैं "अबे! तू तो ज्यादा पढ़-लिख गया है। हिसाब मत लगा। काम करना है तो अन्दर जा। दुगुना ओवरटाइम चाहिए तो ढूंढ ले कोई फैक्टरी लालटेन लेकर।"

इसी तरह हेल्पर की भर्ती हो जाती है।

इन कम्पनियों में पी.एफ., बोनस, परमानेण्ट, पे-स्लिप, पेंशन, ई.एस.आई, कैण्टीन, ड्रेस जैसे शब्द उस चिड़िया के समान हैं, जो बहुत साल पहले बसेरा छोड़कर चली गई।

धागा कटिंग के लिए भरती की लाइन में लड़कियां खड़ी हैं। साहब आता है, इकट्ठे कई सवाल दागता है: "क्यों री, काम करना है? धागा पहले कहीं काटा है? वहां क्यों छोड़ दिया? कितना मिलता था? यहां कहां रहती है, कोई परिचित है?"

साहब को इन सभी प्रश्नों के उत्तर चाहिए क्योंकि अगर लड़की ने पहले कहीं धागा काटने का काम किया होगा तो यहां धागा जल्दी काटेगी, कपड़ा नहीं खराब होगा। नौकरी इसलिए तो नहीं छूटी कि काम ठीक से नहीं करती थी। कोई परिचित होना इसलिए जरूरी है ताकि कम्पनी में काम के लिए देर रात तक रोका जा सके।

एक सवाल कोई भी साहब पूछना नहीं भूलता कि शादी तो नहीं हो गयी? यदि हो गयी है तो कितने बच्चे हैं? साहब के इस घिनौने सवाल का मुख्य पक्ष यह है कि जिन महिलाओं के बच्चे हैं, वे कभी-कभी छुट्टी कर लेती हैं या बहुत देर रात तक फैक्टरी में रुक पाने में उन्हें दिक्कत होती है।

धागा कटिंग करने वाली लड़कियों से बाकी बातें वही होती हैं जो हेल्परों की भरती में हुई, लेकिन तनख्वाह 1000 रुपये दी जायेगी।

अब अगली भरती आपरेटरों की करने जा रहा है साहब। इस लाइन में साहब की नजर में थोड़े उम्रदराज लड़के-लड़कियां हैं। जरूरत 2 मज़दूरों की है, लाइन में 12 लोग खड़े हैं। सभी पांच साल से ज्यादा अनुभव वाले हैं। बिना किसी भाव के सूनी आंखों से बारहों लोग साहब को ताक रहे हैं। हरेक जानता है कि दूसरे को पीछे करके ही वह नौकरी पा सकता है, इसलिए कोई किसी से बोल-बतिया भी नहीं रहा है। जब साहब किसी की तरफ देख लेता है तब भरसक वह मुस्कराने की कोशिश कर देता है।

आपरेटर कुशल कारीगर होता है। पहले कभी इन्हें 'परमानेण्ट वर्कर' वाला वेतन और अन्य सुविधाएं मिल जाती थीं, लेकिन अति उत्पादन के इस रोगी दौर में, जब बेरोजगारी भयंकर रूप से बढ़ रही हो, ये भी मुनाफाखोर की सभी शर्तों पर काम करने के लिए मजबूर हैं। अगर साहब 2400 रुपये तनख्वाह दे रहा है और वह 3000 रुपये मांग रहा है तो एक नकारेगा तो दूसरा तैयार हो जायेगा। अगर तैयार नहीं होगा तो लाला का सिर पर चढ़ा राशन का उधार कैसे चुकता होगा?

इन कारखानों में आपको दो शब्द सुनने को मिलेंगे। एक है – दिहाड़ी, दूसरा है – पीस रेट। ये सिर्फ शब्द नहीं बल्कि धनपिशाचों के औजार हैं, जिनसे वे मज़दूर के खून की आखिरी बूंद तक निचोड़कर अपनी तिजोरी भरना चाहते हैं।

'एक्सपोर्ट गारमेण्ट' फैक्टरियों में ऊपर जितने तरह के काम बताये गये हैं, उनमें ज्यादातर पीस रेट पर काम होता है, पीस रेट में मालिक आपको मशीन या अन्य सामान उपलब्ध करा देगा। आप पीस तैयार कर प्रति पीस के हिसाब से मज़दूरी ले लीजिए। आप कम्पनी में नौकरी (?) करते हैं, लेकिन आपका कोई रिकार्ड नहीं होता। यदि काम नहीं है तो कोई पैसा नहीं। यदि काम है, और यदि आप मर भी रहे हों, तो छुट्टी नहीं मिलने वाली।

काम का दबाव इन फैक्टरियों में ज्यादा से ज्यादा बनाने के लिए हर चार-पांच वर्कर के सिर पर एक स्टाफ सवार रहता है। जिस भी काम पर लगा रखा हो मान लीजिए आप प्रेसमैन हैं ओर प्रेसिंग का काम एक घण्टे बाद आने वाला है तो आप एक घण्टा क्या एक मिनट खाली नहीं बैठ सकते। आपको कहीं भी चाहे माल ढोने में या धागा कटिंग किसी भी काम में लगा दिया जायेगा।

इन फैक्टरियों में काम करने की स्थितियां नारकीय हैं। पूरे समय खड़े रहकर काम करना होता है। मालिकों का इसके पीछे तर्क है कि बैठकर काम करने के बजाय खड़े-खड़े काम ज्यादा फुर्ती से होता है। कपड़ों से हमेशा गर्दा निकलता रहता है, कोई सुरक्षा उपकरण नहीं है। यहां टी.बी., सांस का रोग, पेट, कमर व आंख के गम्भीर रोग आम हैं।

धागा कटिंग में आंख, कमर और गर्दन की बीमारी सबसे ज्यादा होती है। इसी तरह की बीमारियां चेकरों, कटिंग मास्टरों, प्रेसमैनों और फोल्डरों को होती हैं। काम करते हुए अक्सर पेट दर्द, कमर दर्द, सिर दर्द की शिकायत होती है। लेकिन सुपरवाइजर तभी कोई दवा उपलब्ध कराता है जब उसे लग जाता है कि मज़दूर का पूरा शरीर ही जवाब देने लगा है। मेडिकल सुविधा देने के नाम पर इक्का-दुक्का कम्पनियां ही ऐसी हैं जिन्होंने अपने कुछ मज़दूरों

को ई.एस.आई. कार्ड दे रखे हैं। लेकिन यह कार्ड भी बेमानी हो जाता है, क्योंकि एक दिन सरकारी हस्पताल जाने का मतलब है कि एक दिन की दिहाड़ी चली गयी।

पीने के पानी और शौचालय जैसी बुनियादी सुविधाओं तक में मालिक पैसा नहीं लगाना चाहता। एक कम्पनी के मज़दूर साथी ने बताया कि उनकी कम्पनी में कुल 150 वर्कर हैं। एक शौचालय है और एक पानी की टोंटी। ऊपर से मालिक ने एक फरमान जारी कर दिया कि कोई भी वर्कर टोकन लेकर सिर्फ छः बार ही पानी पीने या शौचालय जा सकेगा। इस फरमान का मज़दूरों ने एकजुट विरोध किया। उनका कहना था कि वेतन-बोनस-भत्ते की लड़ाई तो बाद में लड़ेंगे, यह मालिक तो हमें इंसान भी नहीं समझता। आखिर मालिक को मज़दूरों के इस गुस्से को देखते हुए पानी पीने और शौचालय जाने पर लगी पाबन्दी को हटाना पड़ा।

काम करने के दौरान मालिकों और उनके टट्टुओं का व्यवहार मज़दूरों के साथ ऐसा होता है जैसे वे उनके गुलाम हों। गाली-गलौज तो आम बात है। मार-पीट भी आए दिन होती है। उदाहरण के लिए अगर धागा कटिंग के दौरान पीस कट गया तो समझो कि न सिर्फ गाली-गलौज और मारपीट होगी बल्कि पैसा भी काट लिया जायेगा। सोचा जा सकता है कि 1000 रुपये तनख्वाह में से अगर सौ-डेढ़ सौ रुपये काट लिये जायें, तो महीना कैसे गुजरता होगा।

इन एक्सपोर्ट कम्पनियों में एक मज़दूर की ज़िन्दगी कैसे तबाह होती है। इनके मालिक कितने हृदयहीन और अमानवीय होते हैं, इसके लिए यहां पर एक उदाहरण ही काफी है। एक मज़दूर साथी, जो पीलिया के कारण मरते-मरते बचे हैं, ने बताया कि "पिछले दिनों फैक्टरी में काम ज्यादा आ गया था। मैंने भी सोचा कि चलो थोड़ी कमाई हो जायेगी। 1500 रुपये महीने में नोएडा जैसी जगह में आजकल क्या होता है। लेकिन यह तो लेने के देने पड़ गये। छः नाइट लगातार काम किया। तबियत लगातार खराब होती चली गयी। एक दिन तो गजब हो गया। प्रेस चला रहा था, अचानक गिर पड़ा। साथ में काम करने वाले मज़दूर साथी टांग-वांग कर घर पहुंचा गये। अभी तक दवा में ही 850 रुपये लग चुका है। डाक्टर ने रोज जूस पीने के लिए कहा है। इस महीने रात-दिन लगकर 3000 रुपये का काम किया था। मालिक के पास मजूरी लेने गया तो उसने टका सा जवाब दे दिया कि तनख्वाह के समय तनख्वाह मिलेगी और ओवरटाइम के समय ओवरटाइम। मैंने कहा साहब दवा करानी है, कम से कम इस महीने का ओवरटाइम तो दे दो। साहब का कहना था कि यह कोई मदर टेरेसा का अनाथालय तो है नहीं, तुम्हारी तबियत खराब हो और हम दवा कराते रहें। यहां तो रोज ही कोई न कोई बीमार होता है, अगर ऐसे करते रहे तो कम्पनी ही बैठ जायेगी।"

यह तो स्थिति है गारमेण्ट कम्पनियों के भीतर की। इनमें काम करने वाले मजदूर जिन डेरों-क्वार्टरों-लाजों में रहते हैं, वे पुराने जमाने के गुलामों के बाड़ों और जेलखानों के बैरकों से कुछ कम नहीं है। दस-दस, बारह-बारह घण्टे हड्डी गलाने के बाद, पूरी तरह निचुड़े हुए शरीरों में बस इतनी ताकत रहती है कि कुछ रांध -पकाकर पेट में डाले और गुदड़ी फैलाकर पसर जाये। हो सकता है कि सुबह नींद किसी उधार देने वाले के तगादे की हांक से ही खुले। पाई-पाई जोड़कर घर कुछ रकम भेजने की चिन्ता, कमरे का किराया जुटाना, बीमार पड़ने पर नीम-हकीमों के पास जाकर रकम गलाना और दवा कराने की तसल्ली पालना, गन्दगी, सीलन, फुटन, अंधेरा, अनिश्चितता – बस यही है मज़दूर बस्तियों की ज़िन्दगी। उसके बारे में आगे कभी विस्तार से लिखेंगे।

हम लड़ने के लिए कैसे संगठित हों? दिक्कतें और समस्याएं क्या हैं? ट्रेड यूनियनों के दलाल क्या-क्या कारनामे करते हैं? मालिक ट्रेड यूनियनें किस तरह बनने नहीं देते या किस तरह यूनियन नेताओं को खरीदते हैं? इन सबके बारे में भी काफी कुछ लिखने को है जो आगे कभी लिखेंगे।

रपट

चौटाला सरकार के नौकरशाहों का आतंक-राज

दमन-चक्र, गिरफ्तारी और फर्जी मुकदमों के जरिये लोक स्वराज्य पंचायत को रोका!

(बिगुल प्रतिनिधि)

सोनीपत। जनता की छोटी से छोटी क्रान्तिकारी पहलकदमी को भी पूंजीवादी हुकूमत किस तरह एक बड़ी चुनौती के रूप में लेती है, इसका एक उदाहरण पिछले दिनों सोनीपत (हरियाणा) में देखने को मिला। पिछले तीन मार्च को इस जिले में सक्रिय नौजवानों के एक क्रान्तिकारी जन संगठन **नौजवान भारत सभा** ने बरसों से टूटी-फूटी एक सड़क के निर्माण की मांग पर **क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य पंचायत** का आयोजन किया था। स्थानीय प्रशासन ने जनता की इस पंचायत के आयोजन को एक खतरनाक चुनौती के रूप में लिया। दमन-उत्पीड़न के हर मुमकिन हथकण्डे अपनाकर जिला प्रशासन ने इस पंचायत को कामयाब नहीं होने दिया।

लेकिन कामयाबी का पहलू यह रहा कि इस घटना के माध्यम से पूरे इलाके की जनता ने न सिर्फ चौटाला सरकार और उसकी नौकरशाही का आततायी चेहरा देखा बल्कि पूंजीवादी लोकतंत्र का वह पाखण्ड भी देखा जहां उसकी निहायत बुनियादी जरूरत की कहीं कोई सुनवाई नहीं होती और फिर सभा-पंचायत को भी लाठी-गोली-गिरफ्तारी के बूते पर रोक दिया जाता है।

सोनीपत शहर से पुरखास गांव तक जाने वाली लगभग पन्द्रह किमी. लम्बी सड़क, जिसे पुरखास रोड के नाम से जाना जाता है, पिछले पन्द्रह वर्षों से टूटी-फूटी, जर्जर हालत में पड़ी हुई है। सड़क के दोनों तरफ बसे लगभग एक दर्जन गांव के निवासियों के लिए इस सड़क से होकर गुजरना नरक यात्रा से कम नहीं है। सड़क की टूट-फूट का आलम यह है कि कदम-कदम पर बन गये गड्ढों के बीच यहां-वहां बस सड़क के निशान भर दिखते हैं। ऐसे में इस सड़क पर साइकिल-स्कूटर, ट्रैक्टर-ट्राली, जीप-टैम्पो-बस का चलना कितना कष्टकारी अनुभव होता होगा, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

पिछले डेढ़ साल से **नौजवान भारत सभा** की अगुवाई में तमाम गांवों के ग्रामीण, विशेषकर नौजवान, इस सड़क को बनाने के लिए विभिन्न तरीकों से शासन-प्रशासन का ध्यान खींचते रहे हैं। जिला उपायुक्त से लेकर, मुख्यमंत्री-प्रधानमंत्री को अर्जियां दी गयीं, उपायुक्त कार्यालय पर धरने-प्रदर्शन आयोजित किये गये, लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुई। कोई कोरा आश्वासन तक नहीं मिला। मजबूर होकर पिछले साल **'रेल रोको आन्दोलन'** की योजना बनायी गयी, तब जाकर कहीं प्रशासन को मामले की गम्भीरता समझ में आयी। जिला प्रशासन ने एड़ी-चोटी का जोर लगाकर शताब्दी एक्सप्रेस को रोकने का कार्यक्रम तो विफल कर दिया था, लेकिन उसने आश्वासन दिया कि जल्दी ही सड़क-निर्माण का काम शुरू कर दिया जायेगा।

लेकिन यह आश्वासन कोरा ही साबित हुआ। लोगों के गुस्से को तात्कालिक रूप से शान्त करने के लिए प्रशासन ने सड़क बनाने के लिए टेण्डर तो निकलवा दिया लेकिन फिर गाड़ी वहीं रुकी रही। धीरे-धीरे टेण्डर निकले हुए भी चार-पांच महीने गुजर गये, लेकिन सड़क बननी नहीं शुरू हुई। इससे आक्रोश में भरकर ग्रामीणों ने अब आर-पार की लड़ाई का मन बना लिया था।

तीन मार्च को आयोजित होने वाली क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य पंचायत में सड़क निर्माण के लिए फैसलाकुन लड़ाई की घोषणा की जाने वाली थी। पंचायत को सफल बनाने के लिए **नौजवान भारत सभा** के कार्यकर्ता पन्द्रह दिनों से गांव-गांव में मीटिंगें कर रहे थे और व्यापक जनसम्पर्क अभियान चला रहे थे। एक पर्चा भी निकाला गया था, जिसमें **'अपनी लड़ाई आप लड़ो, किसी का इन्तजार न करो'**, का जोशीला आह्वान था। इसमें चुनावी मदारियों और भ्रष्ट जनप्रतिनिधियों से किसी तरह की उम्मीद पालने के बजाय अपनी संगठित ताकत के दम पर गूंगे-बहरे शासन-प्रशासन से लोहा लेने के लिए ललकारा गया था।

गांव-गांव में नौजवान भारत सभा के इस आह्वान को जबर्दस्त समर्थन मिल रहा था और नौजवानों के साथ ही बड़े-बुजुर्ग भी पंचायत में आने के लिए तैयार दिख रहे थे। जिला प्रशासन को अपने खुफिया सूत्रों और चुनावी पार्टियों के दलाल मुखबिरों के जरिये यह भनक लग गयी थी कि पंचायत को जबर्दस्त समर्थन मिल रहा है। इससे प्रशासन सतर्क हो गया और उसे हर कीमत पर पंचायत को नाकाम करने की रणनीति बनानी शुरू कर दी।

अपनी इसी रणनीति के तहत जिला उपायुक्त ने **नौजवान भारत सभा** के एक प्रमुख कार्यकर्ता के घर पर फोन से यह धमकी दी कि पंचायत का आयोजन रोक दिया जाये वरना कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर मुकदमें ठोंक दिये जायेंगे। लेकिन जब पंचायत रद्द नहीं हुई तो प्रशासन खुले रूप में सामने आ गया। पंचायत के ठीक पहले वाली रात दो मार्च को पुलिस पार्टी ने कई गांवों में रात को छापामारी अभियान चलाकर कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार करने और ग्रामीणों को आतंकित करने की शुरुआत कर दी। छापे के दौरान पुलिस ग्राम उरू उल्देपुर और शहजादपुर से **नौजवान सभा** की संयोजन समिति के सदस्य **परिमल कुमार** सहित दो अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं के भाइयों को उठा ले गयी। पुलिस इन तीनों लोगों को उठाकर कहां ले गयी, अगले दिन शाम तक इसका कोई अता-पता नहीं लग सका।

पंचायत के दिन सुबह से ही पुलिस ने पंचायत स्थल और वहां तक पहुंचने के रास्तों की जबर्दस्त नाकेबन्दी कर दी थी। पुलिस पार्टी ने गांवों में घुसकर कार्यकर्ताओं की धरपकड़ और ग्रामीणों को आतंकित करने का सिलसिला जारी रखा। पंचायत स्थल (ग्राम शहजादपुर का सरकारी स्कूल) पर अलग-अलग जत्थों में पैदल और ट्रैक्टर-ट्रालियों पर सवार होकर पहुंच रहे ग्रामीणों को जगह-जगह रोककर पुलिस लाठियां भांजकर तितर-बितर करती रही और कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार करती रही। अपनी इस आतंककारी-दमनकारी कार्रवाई के जरिए पुलिस ने किसी भी जत्थे को पंचायत-स्थल पर नहीं पहुंचने दिया। अन्त में ग्राम **सान्दल खुर्द** से सैकड़ों ग्रामीणों के साथ पंचायत स्थल की ओर नारे लगाते हुए बढ़ रहे **नौजवान भारत सभा के संयोजक पंकज कुमार** को भी दर्जनों साथियों सहित पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और ग्रामीणों को तितर-बितर कर दिया। पुलिस ने पंचायत स्थल से माइक-लाउडस्पीकरों और दरियों-बैनरों को भी जब्त कर लिया। इस तरह आखिरकार प्रशासन पंचायत को नाकाम करने में कामयाब हो गया।

जिला प्रशासन ने अपने इस दमनकारी अभियान में कुल 43 लोगों को गिरफ्तार किया जिनमें 33 लोगों को तो उसने रात में रिहा कर दिया लेकिन उसकी निगाह में चढ़े दस प्रमुख लोगों – **पंकज कुमार, परिमल कुमार, कश्मीर, सतबीर, कुलदीप, कुलदीप उर्फ लालू, सोनू, सुनील, सुनील उर्फ संदीप और छतर सिंह** (भारतीय किसान यूनियन के कार्यकर्ता जो पंचायत में शामिल होने ग्रामीणों के एक जत्थे के साथ आ रहे थे) के ऊपर भारतीय दण्ड संहिता की धाराएं 148, 149, 353, 332 व 506 ठोंक दीं।

पुलिस की इस दमनात्मक कार्रवाई की सोनीपत नगर में भी विभिन्न वर्गों में व्यापक प्रतिक्रिया हुई। अगले ही दिन सोनीपत बार एसोसियेशन ने अपनी बैठक में जिला प्रशासन के दमनात्मक रवैये की तीखी भर्त्सना की और दो दिनों के लिए न्यायिक कार्यों के बहिष्कार का निर्णय लिया। रपट लिखे जाने तक यह बहिष्कार तब तक जारी रखने का निर्णय लिया गया था जब तक कि कार्यकर्ताओं पर ठोंके गये फर्जी मुकदमे वापस नहीं ले लिये जाते। **सुश्री मंजू** के नेतृत्व में **दिशा छात्र संगठन** की महिला इकाई की कार्यकर्ताओं ने भी जिला उपायुक्त से मिलकर पुलिस कार्रवाई पर अपना विरोध जताया और मुकदमें वापस लेने की मांग की।

जमानत पर छूटने के बाद **नौजवान भारत सभा** के कार्यकर्ताओं ने अपनी मीटिंग के जरिये जनतांत्रिक अधिकारों के दमन के सवाल को जनता के बीच व्यापक रूप में ले जाने की घोषणा की और फर्जी मुकदमें वापस लेने के लिए हस्ताक्षर अभियान चलाने का निर्णय लिया गया।

इस पूरे मामले में समझने की बात यह है कि आखिर प्रशासन जनता की इस पंचायत से इतना आतंकित क्यों हो उठा? दरअसल, **क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य पंचायत** का आयोजन भले ही एक सड़क के निर्माण के मुद्दे पर हुआ था, लेकिन इस संस्था के रूप में निहित भविष्य की सम्भावनाओं को शासन-प्रशासन के प्रतिनिधियों ने भांप लिया था। उन्हें यह बात समझ में आ गयी कि **क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य पंचायतों** की अगर भ्रूण हत्या नहीं की गयी तो वे आगे चलकर एक बड़ी चुनौती बन सकती हैं। इसीलिए उन्होंने जनता की इस क्रान्तिकारी पहलकदमी को शुरुआत में ही कुचल देने की ठान ली।

सोनीपत जिला प्रशासन पंचायत को विफल कर आज भले ही अपनी पीठ ठोंक रहा हो, लेकिन यह कौन नहीं जानता कि जनता की पहलकदमी जब एक बार जाग जाती है तो वह फिर मरती नहीं। पंचायत की इस विफलता ने क्षेत्र की जनता को भी काफी कुछ सिखाया है और नौजवान भारत सभा के कार्यकर्ताओं को भी। निश्चित रूप से वे अपनी कमियों की छानबीन कर रहे होंगे। जितना अधिक खुले दिमाग और खुली आंखों से वे अपनी कमियों की पड़ताल करेंगे उतनी ही मजबूती से वे अगला कदम उठा सकेंगे।

मज़दूर आंदोलन को नई धार देने के लिए ट्रेडयूनियनों में जनवाद बहाल करो!

आज का मज़दूर आन्दोलन टूट-फूट-बिखराव का शिकार है। पराजय आज का सच है। इसके तमाम कारणों में से एक प्रमुख कारण ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीकों का लुप्त होते जाना है। अर्थवाद के दलदल में गहरे धंसते जा रहे ट्रेड यूनियनों में मज़दूर हितों को तिलांजलि दे दी गयी है। पदलोलुपता, स्वार्थपरता, मठाधीशी और निजी हित केन्द्र में आ गये हैं। इसके लिए हर धरातल पर जनवाद को कुचलकर नौकरशाही स्थापित की जा चुकी है। ट्रेड यूनियन, आन्दोलन नहीं धंधा बन चुका है। सीटू, एटक, इंटक, बी.एम.एस., एच.एम.एस. जैसे महासंघों के शीर्ष से निकलकर जनवाद निषेधी जहर छोटी-छोटी यूनियनों तक में घर कर गया है।

छोटी यूनियनों में जनवादद्रोही रूप ने कैसे गहराई तक जड़ जमा ली है, इसको चन्द उदाहरणों से समझा जा सकता है।

उत्तरांचल राज्य के तमाम कारखानों में से थोड़े से ही ऐसे कारखाने हैं जहां पर मज़दूरों ने लड़कर, कुर्बानी देकर अपनी यूनियनें बनाई हैं। लेकिन उन कारखानों में भी अलग-अलग रूपों में जनवाद का उल्लंघन होता है। सबसे पहले चुनाव की बात लें। यहां चुनाव की पूरी प्रक्रिया ही सिर के बल खड़ी है। लगभग सभी जगह पहले पदाधिकारी चुने जाते हैं फिर वे अपनी कार्यकारिणी गठित कर लेते हैं। हालांकि कागजों में वे दर्शाते इसके ठीक विपरीत हैं। उसके बाद अध्यक्ष और मंत्री का मनमानापन चलता है। बाकी पदाधिकारी या कार्यकारिणी महज दिखाने के दांत होते हैं। जबकि ट्रेड यूनियन जनवाद कहता है कि पहले कार्यकारिणी का चुनाव होना चाहिए और कार्यकारिणी अपने पदाधिकारियों का चुनाव करे। चुनाव के इस गैरजनवादी तरीके को कारखाने का प्रबंधतंत्र और श्रम विभाग देखकर अनदेखी कर देता है क्योंकि यह पद्धति ही उसके हित में है। ये वे प्रबंधतंत्र या श्रम विभाग हैं जो यूनियनों के पंजीकरण को हर हाल में रद्द करवाने के फिराक में रहते हैं।

आइए, उदाहरणों पर गौर करें। इस क्षेत्र के दो कारखानों की यूनियनों में पिछले वर्ष सदस्यों द्वारा जो पदाधिकारी चुने गये उनको धता बताते हुए मठाधीशों ने गुपचुप तरीके से अपने मनमाफिक पदाधिकारियों व कार्यकारिणी का श्रम विभाग में पंजीकरण करवा लिया। बाद में जब चुने लोगों ने अपना पंजीकरण करवाना चाहा तो श्रम विभाग में मामला विवादित हो गया। जाहिरा तौर पर प्रबंधतंत्र के लिए यह शुभ संकेत था। ये दोनों यूनियनें इंटक की हैं। इनमें से एक यूनियन ने तो गुपचुप तरीके से अपना संविधान बदलकर चुनाव

(पेज 6 पर जारी)

"ट्रेड यूनियन संगठन अपने स्वरूप और जन्म से ही एक जनवादी जन संगठन है। यहां जनवादी शब्द का , उस संगठन के स्वरूप के साथ अक्षरशः मेल बैठाया जाना चाहिए। यदि कोई ट्रेड यूनियन जनसंगठन नहीं है, और यदि वह संगठन जनवादी नहीं है, तो वह अपने कामों को सफलतापूर्वक अंजाम नहीं दे सकता।

ट्रेड यूनियनें मज़दूर वर्ग के लिए महान पाठशालाएं (स्कूल) हैं। वे मज़दूरों की वर्ग चेतना को जगाती हैं; उनके हितों की रक्षा के लिए संगठित संघर्ष के पहले अनुभवों को हासिल कराने में वे मज़दूरों की मदद करती हैं; और मज़दूर वर्ग के अगुआ कार्यकर्ताओं को तैयार करती हैं। अच्छी तरह से संगठित जन ट्रेड यूनियन ऐसी विशाल शक्ति होती है, जिसका ध्यान मालिकों और पूंजीवादी सरकारों को रखना ही पड़ता है।

इसीलिए, यदि मज़दूर वर्ग के दुश्मन ट्रेड यूनियन संगठनों के कायम किये जाने को रोकने के लिए सभी हथकंडों का प्रयोग करने की कोशिश करते हैं, तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जिन देशों में अपने लम्बे और कठिन संघर्षों के बाद मज़दूरों ने ट्रेड यूनियन बनाने के अपने अधिकारों को हासिल कर लिया है वहां, मज़दूर वर्ग के दुश्मन ट्रेड यूनियनों को क्षति पहुंचाने और कमजोर बना देने के लिए हर तरीके का उपयोग करते हैं। मज़दूरों के हितों की रक्षा के लिए बनी ट्रेड यूनियनों को मालिकों और प्रतिगामी सरकारों की सेवा करने वाली संस्था के रूप में बदल देने के लिए मज़दूर वर्ग के यह दुश्मन हर हथकण्डा इस्तेमाल करते हैं। अपने मंसूबों को पूरा करने की गरज से तरह-तरह के राजनीतिज्ञ प्रायः ट्रेड यूनियन संगठनों में घुस आते हैं। ...

ट्रेड यूनियनों में आने वाली इस खराबी से लड़ने का सबसे पक्का और सबसे कारगर तरीका यह है कि वास्तविक ट्रेड यूनियन जनवाद का समर्थन किया जाये और उसे विकसित किया जाये। यह भी कहा जा सकता है कि जहां कहीं भी ट्रेड यूनियन के काम में जनवाद के सिद्धांतों का पालन और प्रयोग होता है, वहां का ट्रेड यूनियन संगठन ठोस और मज़दूर हितों की रक्षा करने की स्थिति में रहता है।"

-सर्जी रोस्तोव्स्की

('ट्रेड यूनियन काम के जनवादी तरीके' से)

गुजरात में नरसंहार

(पेज 1 से आगे)

विधान सभा चुनावों के नतीजे आने के ठीक बाद, जिस दिन संसद में बजट पेश हुआ, उसके ठीक अगले दिन गुजरात में फासीवाद के प्रेत का श्मशानी नृत्य शुरू हो गया। उसके ठीक पहले श्रम-कानूनों में बदलाव करके सरकार ने पूंजीपतियों को यह खुली छूट दे दी थी कि वे अपने मुनाफे के लिए मज़दूरों को जैसे चाहें, जितना चाहें, निचोड़ लें, सरकार बीच में नहीं आयेगी। हां, लाठी-गोली-कानून के जरिए सक्रिय होकर उनकी हिफाजत करने तब ज़रूर आयेगी, जब मज़दूर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष पर आमादा होंगे। इस बजट ने आम जनता के ऊपर मंहगाई का जो कहर बरपा किया है और छंटनी-तालाबन्दी-रोजगार कटौती आदि की रफ्तार तेज कर देने का जो संकेत दिया है, उन सबकी ओर से ध्यान हटाने के लिए और मज़दूरों-कर्मचारियों-छात्रों-युवाओं-छोटे किसानों के एकजुट होकर संघर्षों में उतरने की तैयारी को नाकाम करने के लिए कोई षडयंत्र रचना जरूरी था। यही षडयंत्र गुजरात नरसंहार के रूप में सामने आया है। कमरतोड़ मंहगाई, मज़दूरों के न्यूनतम जनवादी अधिकारों तक में कटौती, पोटो जैसा काला कानून, रक्षा घोटाला, कफनचोरी, विदेशी पूंजीपतियों के स्वागत में पलक-पांवड़े बिछाना, आर्थिक नीतियों की चौतरफा विफलता– सारे के सारे मुद्दों को जिन्दा जलते इंसानों और घरों के धुंए की ओट में ओझल कर देने की कोशिश की गयी और थोड़ी देर के लिए ही सही, लेकिन फिलहाल अपने इस शातिराना गंदे खेल में सत्ताधारियों को कामयाबी भी हासिल हुई है।

जहां तक विपक्षी चुनावबाज पार्टियों का सवाल है, उन्हें भी वोट बैंक की राजनीति के लिए एक सुविधाजनक मुद्दा मिल गया है, क्योंकि उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों पर तो उनकी भी पूरी सहमति रही है। इन मसलों पर विपक्षी दल होने के नाते रस्मी विरोध की फर्ज अदायगी करते हुए भी वे अपने को फंसा हुआ महसूस कर रहे थे क्योंकि व्यापक आम जनता अब इन नीतियों पर संघर्ष के लिए कमर कसती दीख रही थी। अब यह उनके लिए सहूलियत की बात है कि वोट की राजनीति मन्दिर-मस्जिद के सवाल पर हो और साम्राज्यवादी-पूंजीवादी लूट के मसले को दरकिनार कर दिया जाये।

उदारीकरण-निजीकरण की नीतियां करोड़ों लोगों की नौकरियां खा चुकी हैं, बीस करोड़ नौजवान बेरोजगार सड़कों पर भटक रहें हैं, जनता के खून-पसीने से खड़े किये गये पब्लिक सेक्टर की इकाइयों को कौड़ियों के मोल देशी-विदेशी लुटेरों को सौंप देने का सिलसिला एकदम तेज कर दिया गया है, विदेशी पूंजीपतियों को खुली छूट दे दी गयी है कि वे आयें और हमारे देश के मजदूरों के श्रम को मनचाहे ढंग से निचोड़ें और यहां की प्राकृतिक सम्पदा भी लाद ले जायें, कर्जों का सूद मात्र चुकाने के लिए पूरी अर्थव्यवस्था गिरवी रख दी गयी है, करोड़ों का जीना मुहाल है और "धर्म खतरे में है" का नारा लगाते हुए देश को भातृघाती-आत्मघाती गृहयुद्ध में उलझाकर आदिम युगों की ओर धकेला जा रहा है तथा जनशक्ति की एकजुटता की प्रक्रिया तोड़ी जा रही है। देशभक्ति के सभी नारे पड़ोसी देशों के खिलाफ दिये जाते हैं और यूरोप-अमेरिका के साम्राज्यवादी डाकुओं के रंगमहल में जाकर उनके चरणों पर पगड़ी रखकर साष्टांग करते समय राष्ट्री सम्मान की सारी बातें हवा हो जाती हैं। साम्राज्यवादी आकाओं की पादुका सिंहासन पर रखकर राज करने वालों का यही "रामराज्य" है! पूंजीपतियों के ट्रूओं का यही "रामराज्य" है! आखिर कब तक हम इंसानियत के इन सौदागरों द्वारा भरमाये जाते रहेंगे? आखिर कब तक हम इन चुनावी ठगों के हाथों ठगे जाते रहेंगे?

धर्मोन्माद में बहकना छोड़ो
सही लड़ाई से नाता जोड़ो

इस देश के करोड़ों-करोड़ मेहनतकशों को यह समझना ही होगा कि धर्म, जाति, नस्ल आदि के आधार पर अवाम को बांटकर अपना उल्लू सीधा करना तो हुकूमती जमातों का सदियों पुराना खेल है जो नये-नये रूपों में खेला जाता रहा है। इस साजिश को समझना हमारी मुक्ति की शर्त है, इंसानों की तरह जीने की शर्त है, एकजुट होकर लड़ने की शर्त है।

मेहनतकशों को यह समझना ही होगा कि हुकूमती जमातों का बस एक ही धर्म है – पूंजी का धर्म, लूट का धर्म, हुकूमत का धर्म। मुट्ठी भर लुटेरों के एजेण्ट बुर्जुआ राजनीतिज्ञ हमारे पिछड़ेपन का लाभ उठाकर धर्म का खेल खेलते हैं और यही खेल जब आगे बढ़ जाता है तो फासीवाद का राक्षस मजबूत होकर सामने आता है।

मेहनतकशों को यह समझना ही होगा कि भारत का वर्तमान हिन्दू कट्टरपंथी फासीवाद भी इस देश और पूरी दुनिया की वित्तीय पूंजी का ही एक चाकर है। यह हिटलर-मुसोलिनी की राजनीति का भारतीय रूप है। इसका पहला शत्रु मज़दूर आन्दोलन है। अल्पसंख्यकों को लक्ष्य बनाकर यह उन्माद पैदा करता है, जन-एकजुटता को तोड़ता है और फिर मेहनतकशों की क्रान्तिकारी राजनीति को अपना निशाना बनाता है। अल्पसंख्यकों के हितों की दुहाई देता हुआ, इनके विरोध में जो धार्मिक कट्टरपंथ सामने खड़ा होता है, वह भी इन्हीं के लक्ष्य के पूरक की भूमिका निभाता है। सच्ची क्रान्तिकारी राजनीति धर्म को सार्वजनिक जीवन से हटाकर निजी विश्वास की वस्तु मानती है और मेहनत करने वाली बहुसंख्यक आबादी के मुश्तरका हितों की हिफाजत के लिए लड़ती है।

मेहनतकशों को यह समझना ही होगा कि आबादी का बंटवारा तीस करोड़ मुसलमानों, तीस करोड़ दलितों, शेष हिन्दू आबादी और कुछ-एक करोड़ अन्य अल्पसंख्यक धर्मानुयाइयों के बीच नहीं है, बल्कि पचासी प्रतिशत शोषितों और पन्द्रह फीसदी शोषकों के बीच है। हमें शोषकों की राजनीति का मोहरा बनने के बजाय अपनी इंकलाबी राजनीति का परचम ऊंचा उठाना होगा।

मेहनतकश जनता को यह समझना ही होगा कि आज यह सवाल सबसे अधिक ज्वलंत रूप में ऐन हमारी आंखों के सामने खड़ा है कि – "या तो समाजवाद या फिर बर्बरता" – या तो मेहनतकशों की हुकूमत या फिर फासिस्टों की राक्षसी हुकूमत के तहत खून से लाल नदियां लाशों के अम्बार से जाम सड़कें और आग में धू-धू करके जलती मानवीय उपलब्धियां, घर, खेत, कारखाने, पुस्तकालय और ज्ञान-विज्ञान! हमें अपना भविष्य तय करना होगा। हमें लोहे के हाथों से मानवद्रोही शक्तियों से लोहा लेना होगा।

आले में देवमूर्तियां रखकर तिजोरियों में "शुभ लाभ" भरने वालों का राजनीतिक खेल मेहनतकशों के आपस में लड़ाने और बांटने का खेल है। रामजन्मभूमि का ताला खुलने से लेकर अब तक के अठारह वर्षों के दौर की राजनीति क्या यह सिद्ध करने के लिए काफी नहीं है कि यह महज पूंजीवादी राजनीति की एक गंदा शातिराना चाल है? और क्या सबसे अहम बात यह नहीं है कि जब आम जनता और मज़दूरों के हकों पर सबसे बड़ी और फैसलाकुन चोट की जानी थी, तभी धर्म और जाति के नाम पर उन्हें बांटने का काम सबसे बड़े पैमाने पर किया गया?

सोचो मज़दूर साथियो! सोचो तमाम मेहनतकशों! सोचो तमाम ग़रीबो-मजलूमो! सोचो, छात्रो-नौजवानो! यह विनाशलीला रचने वाले लोग कौन हैं? यह किन लोगों के हक में है? सोचो, और आम जनता की एकता को मजबूत बनाओ! सोचो, और फासिस्ट शक्तियों के विरुद्ध फैसलाकुन लड़ाई की तैयारी में जुट जाओ! सोचो, और जनता की वास्तविक मुक्ति की लड़ाई को एक बार फिर नये सिरे से संगठित करने में भिड़ जाओ! यही एक रास्ता है! दूसरा कोई नहीं।

मजदूर आन्दोलन फिर सरगर्म हो रहा

(पेज 1 से आगे)

के बाद मज़दूर आन्दोलन को एकजुट करने का जन-दबाव इतना बढ़ गया है कि केन्द्रीय ट्रेड यूनियन महासंघों के नेताओं ने भी मज़दूर-यूनियनों की एकता पर सहमति जाहिर की है और यह कहने को मजबूर हो गये हैं कि यूनियनों को पार्टियों के राजनीतिक दबाव से उबरकर एकजुट होना होगा। विगत 27 फरवरी को दिल्ली में हिंद मज़दूर सभा के अधिवेशन में पारित ऐसे प्रस्ताव का एटक और सीटू सहित सभी यूनियनों के नेताओं ने "स्वागत किया"। सभी यूनियनों से बातचीत कर उन्हें विलय के लिए राजी करने का जिम्मा हिन्द मज़दूर सभा को सौंपा गया है।

इन सभी यूनियनों के केन्द्रीय नेतृत्व की अतीत की कारगुजारियों के रिकार्ड को देखते हुए उपरोक्त प्रस्ताव के अमल पर शंका करना नावाज़िब नहीं है। यह भी तथ्य है कि इन सभी यूनियन-महासंघों के केन्द्रीय नेता अलग-अलग चुनावी दलों के नेतृत्वकारी कमेटियों के सदस्य भी हैं। ये मज़दूर हितों को लेकर अपने-अपने दलों के खिलाफ वाकई (दिखावे के लिए नहीं) यदि खड़े होने लगे, तब तो इनका कायाकल्प हो जायेगा। पर इसकी उम्मीद कम ही है। यह हमारा निराशावाद नहीं, बल्कि व्यावहारिक समझ है। यदि ऐसा हो तबतो बुर्जुआ दलों और नकली वामपंथी दलों की ट्रेड यूनियन दुकानदारियों का मकसद ही शिकस्त खा जायेगा। फिर भी यदि इस दिशा में, व्यापक मज़दूर आबादी के दबाव से यदि कोई प्रगति होती है तो उसका तहेदिल से स्वागत किया जाना चाहिए। ऐसा नहीं कि इससे मज़दूर आन्दोलन की बुनियादी समस्या दूर हो जायेगी। एकीकृत मज़दूर यूनियन में भी अलग-अलग बुर्जुआ दलों के गुट और किसिम-किसिम की अर्थवादी धड़ेबन्दियां मौजूद रहेंगी, जिनसे पार पाने के लिए मज़दूरों के बीच सघन और लम्बे क्रान्तिकारी राजनीतिक काम की दरकार होगी। ट्रेड यूनियन नौकरशाही और अर्थवाद की जकड़बन्दी के खिलाफ एक लम्बी लड़ाई आगे भी चलेगी। लेकिन यह सच है कि एकजुट मज़दूर आन्दोलन के भीतर इन संघर्षों के लिए अधिक अनुकूल परिस्थितियां रहेंगी। साथ ही देशव्यापी स्तर पर एकजुट मज़दूर आन्दोलन विभिन्न मांगों को लेकर जब सत्ता पर ज्यादा प्रभावी दबाव बनायेगी तो मज़दूरों की चेतना भी आगे बढ़ेगी और पूंजीवादी हुकूमत का चेहरा भी उनके सामने ज्यादा से ज्यादा नंगा होता जायेगा। ऐसे में ट्रेड यूनियन आन्दोलन एक बार फिर मज़दूर-संघर्ष की एक बुनियादी पाठशाला बन जायेगा जहां से आगे बढ़कर मज़दूर राज्यसत्ता के लिए भी लड़ना सीखेंगे।

यदि मज़दूर आन्दोलन का मौजूदा नेतृत्व अपने करार से मुकर जाता है और एक-दूसरे पर दोषारोपण करते हुए एकता के जुबानी जमाखर्च तक ही रह जाता है, तो भी यह अच्छा ही होगा। मज़दूरों में व्यापक एकता की चेतना जब पैदा होने लगी है तो यह आगे ही बढ़ेगी। एक के बाद एक, मज़दूर-विरोधी नीतियां भी इसमें मददगार ही बनेंगी। ऐसे में मज़दूर अपने मौकापरस्त नेताओं को किनारे लगाकर स्वयं एकजुट होने की दिशा में आगे बढ़ेंगे। यदि मज़दूर वर्ग के वास्तविक हरावल और नेता ऐसे समय में सूझ-बूझ से काम लेंगे और मजदूरों के बीच, उनके सभी संघर्षों में भागीदारी करते हुए क्रान्तिकारी प्रचार की कार्रवाई लगातार चलाते रहेंगे तो ट्रेड यूनियन आन्दोलन के क्रान्तिकारीकरण की प्रक्रिया भी तेज होगी और समूचे मज़दूर वर्ग को समाजवादी क्रान्ति केलिए तेजी से तैयार किया जा सकेगा। साथ ही, यह प्रक्रिया मज़दूर क्रान्ति को नेतृत्व देने में सक्षम एक सर्वभारतीय क्रान्तिकारी पार्टी के पुनर्निर्माण एवं पुनर्गठन की जारी प्रक्रिया में भी तेज उछाल ला देगी।

निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों से बरपा होते कहर ने मज़दूरों में असन्तोष को विस्फोटक बना दिया है जिसे भांपकर ट्रेड यूनियन नेता भी सक्रिय हो उठे हैं। आने वाले दिनों में, एक के बाद एक, आन्दोलन के कई कार्यक्रम लिये गये हैं। अभी जल्दी ही, 5 मार्च को विभिन्न राज्य सरकारों के सत्तर लाख कर्मचारी राष्ट्रीय प्रतिरोध दिवस मनायेंगे। 14 मार्च को राष्ट्रीय ट्रेड यूनियनें देशव्यापी विरोध-आन्दोलन चलायेंगी। अप्रैल में बैंकों और बीमा कम्पनियों जैसी सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के कर्मचारी हड़ताल करने वाले हैं, (हालांकि इनकी तैयारी का आलम यह है कि अभी ज्यादातर कर्मचारियों को इसकी सूचना तक नहीं है)। इस दौरान विभिन्न प्रदर्शनों, धरनों, हड़तालों और कामबन्दी के कई प्रोग्राम तय किये गये हैं। इन सबके पीछे एक तात्कालिक दबाव तो यह काम कर रहा है कि औद्योगिक विवाद कानून में संशोधन के लिए सरकार जो विधेयक लाई है उसे कानून बनने से रोका जा सके, लेकिन मूल बात यह है कि उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों के खिलाफ मज़दूर फैसलाकुन लड़ाई लड़ना चाहते हैं। रस्मी कवायदों से वे तंग आ गये हैं और यूनियन नेताओं पर भारी दबाव है कि वे एकजुट होकर आन्दोलन का कार्यक्रम तय करें। यह एक शुभ संकेत है।

हम मज़दूर वर्ग का आह्वान करते हैं कि वे आन्दोलन के सभी कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर, पूरी ताकत के साथ हिस्सा लें। मौजूदा नेतृत्व यदि पीछे हटता है तो उसे उसकी असली जगह दिखा दें, जो, जाहिर तौर पर, कूड़ेदान ही हो सकता है।

ट्रेड यूनियनों में जनवाद की बहाली

(पेज 5 से आगे)

एक वर्ष की जगह द्विवार्षिक करवा लिया है। गौरतलब है कि इनमें से एक क्षेत्र का सबसे बड़ा कारखाना है और वहां पहले से ही छः-छः यूनियनें कार्यरत हैं।

इसी प्रकार एक अन्य कारखाने की यूनियन में विगत बारह वर्षों से अध्यक्ष और मंत्री पद पर वही व्यक्ति काबिज हैं जिनकी श्रेष्ठता बरकरार है। ये दोनों पदाधिकारी कारखाने से एक दशक से निष्कासित हैं। इनके अपने कारोबार हैं और वे भाजपा की राजनीति में सक्रिय हैं और पदासीन भी।

कुछ कारखाने ऐसे हैं जहां आम सहमति से पदाधिकारी चुने जाते हैं। अब दबंग नेताओं के समक्ष तो ईमानदार किन्तु सीधे-साधे मज़दूर बोल नहीं सकते। वे क्षेत्रवाद-जातिवाद की हवा चलाकर मज़दूर आबादी को खण्ड-खण्ड में बांट देते हैं। इनमें से जहां कई मठाधीश पैदा हो जाते हैं वहां एक कारखाने में एक से दो-चार-छह यूनियनें तक बन जाती हैं। लेकिन कहीं पर भी यूनियनों के काम करने के जनवादी तरीके प्रयोग में नहीं लाये जाते हैं।

सार्वजनिक क्षेत्र की यूनियनों में भी नौकरशाही-फरमानशाही का आलम गहरा है। यहां सबसे बड़े सेक्टर रेलवे का उदाहरण देखें। रेलवे में कारखाने, सिग्नल या लाइन पर काम करने वाले तमाम जगहों पर सुपरवाइजर या चार्जमैन जिस यूनियन का सदस्य होगा वह अपने मातहतों को उसी यूनियन की रसीद काटकर सदस्य बना लेगा। तमाम मज़दूरों को तो यह भी नहीं मालूम कि वे किस यूनियन में हैं या उनके पदाधिकारी कौन हैं। उन्हें तो वेतन के साथ रसीद मिलती रहती है।

हालात ये हैं कि जहां पर जनवाद बहाली का प्रश्न उठ भी जाता है वहां या तो दादागीरी चलायी जाती है अथवा इसके औचित्य पर ही प्रश्न उठा दिया जाता है। अभी उत्तरांचल के एक छोटे से कारखाने – 'होण्डा पावर प्रोडक्ट्स लि.' की यूनियन ने जनवाद बहाली की शानदार पहल ली। इस वर्ष वहां कार्यकारिणी का चुनाव करवाने का निर्णय लिया गया। कुछ लोगों द्वारा (प्रबंधतंत्र द्वारा प्रायोजित रूप से भी) इसके औचित्य पर ही सवाल उठाया गया। लेकिन अन्ततः यहां जनवादी तरीके से चुनाव सम्पन्न हुआ।

ट्रेड यूनियनों का वास्तविक जनवाद क्या है?

किसी भी ट्रेड यूनियन को जुझारू होने के साथ ही जनवादी भी होना चाहिए। ट्रेड यूनियन जितना ही जनवादी होगा वह उतने ही जुझारूपन के साथ

(पेज 8 पर जारी)

खुले मन वाला और निष्कपट बनो, षडयन्त्र और सांठ-गांठ मत करो

क्या कोई व्यक्ति खुले मन वाला और निष्कपट है, या वह षडयन्त्र और सांठ-गांठ करता है? यह प्रश्न सर्वहारा क्रांतिकारियों और बुर्जुआ कैरियरवादियों के बीच एक विभाजक रेखा का काम करता है। अध्यक्ष माओ की कार्यदिशा का विरोध करने और एक संशोधनवादी कार्यदिशा लागू करने के लिए, बुर्जुआ वर्ग के सभी दलाल, जो किसी तरह से पार्टी में रेंग आए हैं, निरपवाद रूप से फूटों को बढ़ाने का प्रयास करते हैं। अपने दांव-घातों के रूप में वे हर प्रकार के षडयन्त्र और सांठ-गांठ का इस्तेमाल करते हैं। हम, कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को, पूर्ण क्रांतिकारी एकता को कायम रखते हुए और हमेशा खुले मन वाला और निष्कपट बने रहते हुए, अध्यक्ष माओ की क्रांतिकारी कार्यदिशा का दृढ़ता के साथ पालन करना चाहिए।

खुले मन वाला और निष्कपट रहना सर्वहारा वर्ग के गुण हैं जो इसकी पार्टी स्पिरिट को ठोस बनाते हैं। सर्वहारा वर्ग मानवता के इतिहास में महानतम क्रांतिकारी वर्ग है, वह वर्ग जो सबसे ज्यादा दूरदृष्टा है, सबसे कम स्वार्थी है, और जो क्रांति में सबसे रैडिकल होता है। सर्वहारा वर्ग उस दिशा को मूर्त रूप देता है जिसमें इतिहास आगे बढ़ रहा होता है। इसके वर्ग हित सम्पूर्ण मेहनतकश आबादी के हितों के साथ पूरी तरह मेल खाते हैं। इसे पूरा यकीन होता है कि इसका उद्देश्य न्यायपूर्ण है और अंततः इसकी ही विजय होगी। इसीलिए सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी हमेशा खुले मन की और निष्कपट होती हैं। इसीलिए वे हमेशा खुले तौर पर अपनी राजनीतिक धारणाओं और लक्ष्यों की घोषणा करते हैं। सौ से भी अधिक साल पहले ही, मार्क्स और एंगेल्स ने **'कम्युनिस्ट पार्टी के घोषणापत्र'** में प्रभावशाली ढंग से घोषणा कर दी थी: **"कम्युनिस्ट अपने विचारों और उद्देश्यों को छिपाने से घृणा करते हैं, वे खुले तौर पर ऐलान करते हैं कि उनके लक्ष्य सभी अस्तित्वमान सामाजिक स्थितियों को बल प्रयोग द्वारा विध्वंस से ही पूरे हो सकते हैं। शासक वर्गों को कम्युनिस्ट क्रांति से कांपने दो। सर्वहारा के पास खोने के लिए अपनी बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है। उनके पास जीतने को सारी दुनिया है।"** चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की सातवीं राष्ट्रीय कांग्रेस को अपनी रिपोर्ट में अध्यक्ष माओ ने साफ तौर पर बताया है: **"हम कम्युनिस्ट अपने राजनीतिक विचारों को छुपाते नहीं। निश्चित रूप से और बिना किसी संदेह के, हमारा भविष्य या अधिकतम कार्यक्रम चीन को समाजवाद और कम्युनिज्म की तरफ ले जाना है। हमारी पार्टी का नाम और हमारा मार्क्सवादी विश्वदृष्टिकोण दोनों ही असंदिग्ध रूप से भविष्य के इस सर्वोच्च आदर्श की ओर इशारा करते हैं, एक अतुलनीय उज्जवलता और भव्यता के भविष्य की ओर।"**

खुले मन का और निष्कपट होना – यह सर्वहारा वर्ग की पार्टी के काम करने का जुझारू तरीका है और साथ ही सही कार्यदिशा के पूरी तरह से लागू होने की एक महत्वपूर्ण गारण्टी है। अध्यक्ष माओ ने कहा है: **"सर्वहारा वर्ग के लिए एक गम्भीर और जुझारू वैज्ञानिक रुख सबसे तेज और सबसे प्रभावशाली हथियार है।"** हमारी पार्टी प्रत्येक व्यक्ति के हित में बनी है; यह चीन और दुनिया की आबादी के विशाल बहुलांश के लिए सेवारत है। यह जनता के व्यापकतम हिस्सों के हितों से अलग निजी हितों की पूर्ति नहीं करती। जनता की एक समान रूप से सेवा करना – यही हम कम्युनिस्टों के लिए मुख्य उद्देश्य है। इस उद्देश्य से शुरू होकर ही हमारी पार्टी का कार्यक्रम, कार्यदिशा, अवस्थिति और राजनीतिक सिद्धांत तय होते हैं। इसलिए यह जनता के व्यापक हिस्सों का गर्मजोशी भरा समर्थन प्राप्त करने के काबिल है। सच हमारी ओर है, जिस तरह मजदूरों और किसानों के व्यापक हिस्सों का विशाल बहुमत हमारी ओर है। यही वह चीज है जो अध्यक्ष माओ सर्वहारा क्रांतिकारी राजनीतिक सिद्धांतों को लागू करते वक्त, हमें दृढ़ अवस्थितियों पर बने रहने, हमारे झण्डे को इतना ऊंचा उठाने ताकि सब उसे देख सकें, और व्यापक क्रांतिकारी जनता के बीच उन्हें गोलबन्द करने के लिए प्रचार करने और पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा और सिद्धांतों को समझने के काबिल बनाती है ताकि हम इन सिद्धांतों को जनता की सेवा में लगा सकें और जनता को अध्यक्ष माओ की क्रांतिकारी कार्यदिशा पर विजय की ओर ले जा सकें।

खुले मन का और निष्कपट होना ऐसे राजनीतिक गुण हैं जो हर कम्युनिस्ट के पास होने चाहिए। जैसा कि अध्यक्ष माओ समझाते हैं: **"एक कम्युनिस्ट का मन बड़ा होना चाहिए और क्रांति के हितों को अपने जीवन के हित समान मानते हुए और अपने व्यक्तिगत हितों को क्रांति के हितों के अन्तर्गत रखते हुए उसे निष्ठावान और गतिशील होना चाहिए। हमेशा और हर जगह उसे सिद्धांतों का पालन करना चाहिए और सभी गलत विचारों और कामों के विरुद्ध एक अनथक संघर्ष छेड़ देना चाहिए ..."** जिस दिन से वह पार्टी में शामिल होता है, एक कम्युनिस्ट को अपनी पूरी जिन्दगी पार्टी के उद्देश्य को समर्पित कर देनी चाहिए। इसीलिए कम्युनिस्टों को राजनीतिक रूप से खुले मन का और निष्कपट होना चाहिए, उसके पास अपने विचारों का सार्वजनिक तौर पर ऐलान करने की और सभी नुकसानदायक गतिविधियों और गलत रुझानों के विरुद्ध संघर्ष करने की हिम्मत होनी चाहिए। सांगठनिक मोर्चे पर, उसे पार्टी के सिद्धांतों के साथ मेल बिठाते हुए अपने कार्यकलापों में निष्कपट होना चाहिए। अपने काम करने के तरीकों में बुर्जुआ राजनीतिज्ञों की तरह उन्हें कतई व्यवहार नहीं करना चाहिए और उन्हें साजिशों और सांठ-गांठ में भी कभी शामिल नहीं होना चाहिए।

सांठ-गांठ और साजिशें शोषक वर्गों और उनकी राजनीतिक पार्टियों की चारित्रिक विशेषताएं हैं। शोषक वर्गों के हित और व्यापक जनता के हित परस्पर विरोधी होते हैं। शोषक वर्गों में अपने सच्चे इरादों की घोषणा करने की हिम्मत नहीं होती, जो दरअसल सर्वहारा वर्ग और समूची मेहनतकश जनता का शोषण और दमन करना है। इसलिए वे हमेशा अपने वर्ग हितों को सम्पूर्ण मानवता के हितों के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। हर दिन अपने प्रति क्रांतिकारी उद्देश्य के लिए काम करते हुए भी अपने झूठे रूप को प्रस्तुत करने के लिए, उनके होठों पर हमेशा "परोपकार, न्याय और सदाचार", "मुक्ति, भ्रातृत्व और समानता" आदि जैसे जुमले रहते हैं, जिसके जरिए वे मेहनतकश जनता को धोखा देते हैं और शोषक वर्गों की तानाशाही का चरित्र छिपाते हैं, ताकि वे अपना प्रतिक्रियावादी प्रभाव कायम रख सकें। पार्टी के भीतर अवसरवादी कार्यदिशा के सारे सरदार शोषक वर्गों के हितों की नुमाइन्दगी करते हैं। वे मुट्ठी भर ही हैं। वे सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जनता के दुश्मन हैं और अपने प्रतिक्रियावादी राजनीतिक लक्ष्यों को खुले तौर पर घोषणा नहीं कर सकते। इस तरह वे साजिशें रचकर और सांठ-गांठ करके ही जीवित रह सकते हैं। अगर वे अपनी चालबाजी, षडयन्त्रों, किसी भी तरह से अपनी ताकत बढ़ाने के प्रयासों, और अफवाहें फैलाने को रोक देते तो एक दिन भी उनका काम नहीं चल सकता। अभी तक हमारी पार्टी के इतिहास में विभिन्न अवसरवादी कार्यदिशाओं के जितने भी मुखिया प्रकट हुए हैं, निरपवाद रूप से सब के सब साजिशें करने और षडयंत्र रचने में माहिर रहे हैं। हम चाहें या न चाहें, ऐसे व्यक्ति अभी भी वस्तुतः होते हैं। उनका व्यवहार सभी अवसरवादियों और संशोधनवादियों की चारित्रिक विशेषता होता है और उनके प्रतिक्रियावादी वर्ग चरित्र से तय होता है।

लिन प्याओ और उसके पार्टी-विरोधी गिरोह ने एक क्रांति-विरोधी संशोधनवादी कार्यदिशा को लागू किया और हर तरह की क्रांति-विरोधी कूटनीतिक दुरंगी चालों का इस्तेमाल किया। राजनीतिक मोर्चे पर वे पार्टी और समाजवाद का समर्थन करने का नाटक करते थे, लेकिन गुप्त रूप से क्रांतिकारी नेताओं, सर्वहारा की तानाशाही और समाजवादी व्यवस्था का अपमान करते हुए वे अपने छुरे तेज कर रहे थे। सैद्धांतिक मोर्चे पर "फलां से फलां संदर्भ" को उद्धत करके वे कुछ मार्क्सवादी-लेनिनवादी जुमलों को बूक लेते थे, ताकि वे लोगों को प्रभावित कर सकें। लेकिन सच्चाई यह थी कि वे चालबाजी में, सही को गलत और गलत को सही बनाने में लगे रहते थे और मार्क्सवाद-लेनिनवाद को बुरी तरह से तोड़ने-मरोड़ने, विकृत करने और विघटित कर देने के लिए तिकड़म करते रहते थे। सांगठनिक मोर्चे पर वे "एकता" का नकली आह्वान किया करते थे, लेकिन दरअसल वे जिन्हें भर्ती करते थे वे खराब तत्व होते थे, वे अपने हितों की पूर्ति के लिए गुट बनाते थे, उन्होंने एक बुर्जुआ हेडक्वार्टर बनाया और अंत में फूटकारी गतिविधियों में संलग्न हुए। उनके काम करने का तरीका दिखावटी तौर पर आज्ञा का पालन करना था, जबकि असलियत में उसका विरोध करना, बोलना कुछ और करना कुछ, और कई चेहरा रखना था। जैसे ही वे पकड़ में आए वे हमला करके अपना बचाव करते आत्मालोचना का दिखावा करते हुए, जरूरत हो तो दो-चार आंसू गिराकर, चेहरे पर परेशानी के भावों की ओट में घात लगाकर बैठ गए – अपना असली चेहरा फिर से दिखाने के सही मौके के इंतजार में। संक्षेप में, लिन प्याओ और उसके मुट्ठी भर अंधभक्तों ने मिलकर षडयंत्रकारियों का एक क्रांति-विरोधी गिरोह बनाया था जो "कभी उद्धरणों (माओ त्से-तुङ के **उद्धरणों** का संकलन जो चीनी जनता में बेहद लोकप्रिय था। – अनु) की एक प्रति के बिना कभी प्रकट नहीं होते थे, जो 'जिन्दाबाद' के बिना कभी बोलना नहीं शुरू करते थे, और जो आपके मुंह पर मीठा बोलते थे और पीठ में छुरा भोंक देते थे।" वे सर्वहारा वर्ग और समूचे मेहनतकश वर्ग के सबसे खूंखार दुश्मन थे। "प्रोजेक्ट '571' की रूपरेखा" (लिन प्याओ की तख्ता पलट की योजना का नाम) में उल्लिखित उनके प्रतिक्रांतिकारी तख्ता पलट की योजना में उन्होंने अपने आप को षडयंत्रकारियों और बुर्जुआ कैरियरवादियों के एक झुण्ड के रूप में बेनकाब कर दिया। स्वाभाविक रूप से उनका वही हुआ जो सभी षडयंत्रकारियों और कैरियरवादियों का होता है – उनका शर्मनाक अंत हुआ और उनका पूरी तरह सफाया हो गया।

(क्रमशः)

विशेष सामग्री

(तेरहवीं किश्त)

पार्टी की बुनियादी समझदारी

अध्याय -5

पार्टी के "तीन करने योग्य और तीन न करने योग्य" का सिद्धान्त

एक क्रांतिकारी पार्टी के बिना मजदूर वर्ग क्रांति को कतई अंजाम नहीं दे सकता। लेनिन ने इस बात को बार-बार जोर देकर कहा था। स्तालिन और माओ ने भी बराबर इस बात पर जोर दिया और बीसवीं सदी की सभी सफल सर्वहारा क्रान्तियों ने भी इसे सत्यापित किया।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के सांगठनिक उसूलों का निर्धारण किया और इसी फौलादी सांचे में बोल्शेविक पार्टी को ढाला। चीन की पार्टी भी बोल्शेविक पार्टी की ही उत्तराधिकारी थी। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान, समाजवादी समाज में वर्ग-संघर्ष का संचालन करते हुए माओ के नेतृत्व में चीन की पार्टी ने अन्य युगान्तरकारी सैद्धान्तिक उपलब्धियों के साथ-साथ लेनिनवादी सांगठनिक सिद्धान्तों को भी और आगे विकसित किया।

सोवियत संघ और चीन में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के लिए बुर्जुआ तत्वों ने सबसे पहले यही जरूरी समझा कि सर्वहारा वर्ग की पार्टी का चरित्र बदल दिया जाये। हमारे देश में भी संसदीय रास्ते की अनुगामी नामधारी कम्युनिस्ट पार्टियां मौजूद हैं। भारतीय मजदूर क्रांति को सफल बनाने के लिए भारत में भी सर्वहारा वर्ग की एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी खड़ी करने का काम सर्वोपरि है।

इसके लिए बेहद जरूरी है कि मजदूर वर्ग यह जाने कि असली और नकली कम्युनिस्ट पार्टी में क्या फर्क होता है और एक क्रान्तिकारी पार्टी कैसे खड़ी की जानी चाहिए।

इसी उद्देश्य से, फरवरी, 2001 अंक से हमने एक बेहद जरूरी किताब 'पार्टी की बुनियादी समझदारी' के अध्यायों का किश्तों में प्रकाशन शुरू किया है। इस अंक में तेरहवीं किश्त दी जा रही है। यह किताब सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पार्टी-कतारों और युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए तैयार की गयी श्रृंखला की एक कड़ी थी। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की दसवीं कांग्रेस (1973) में पार्टी के गतिशील क्रान्तिकारी चरित्र को बनाये रखने के प्रश्न पर अहम सैद्धान्तिक चर्चा हुई थी, पार्टी का नया संविधान पारित किया गया था और संविधान पर एक महत्वपूर्ण रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। इसी नई रोशनी में यह पुस्तक एक सम्पादकमण्डल द्वारा तैयार की गयी थी। मार्च, 1974 में पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, शंघाई से इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की 4,74,000 प्रतियां छपीं। यह पुस्तक पहले चीनी भाषा से फ्रांसीसी भाषा में अनूदित हुई और 1976 में प्रकाशित हुई। फिर नार्मन बेथ्यून इंस्टीच्यूट, टोरण्टो (कनाडा) ने इसका फ्रांसीसी से अंग्रेजी में अनुवाद कराया और 1976 में ही इसे प्रकाशित भी कर दिया। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद मूल पुस्तक के इसी अंग्रेजी संस्करण से किया गया है।

- सम्पादक

नेपाल के क्रान्तिकारी संघर्ष को कुचलने के लिए अब प्रत्यक्ष अमेरिकी दखलन्दाजी की तैयारी

हथियारों के मद में 20 करोड़ डालर की भारी मदद, अमेरिकी रक्षा विशेषज्ञ नेपाल पहुंचे

नेपाल की मेहनतकश जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष को कुचलने के लिए अमेरिकी साम्राज्यवादी अब सीधे हस्तक्षेप का फैसला ले चुके हैं।

अभी पिछले दिनों नेपाल में अमेरिका के राजदूत माइकल ई. मालिनोव्स्की ने पश्चिमी नेपाल के अछाम जिले का दौरा किया जहां विगत 17 फरवरी को माओवादी छापामारों से संघर्ष में सुरक्षा बलों के 150 जवान मारे गये थे। पिछले छः वर्षों से जारी क्रान्तिकारी संघर्ष में यह छापामारों की सबसे बड़ी कार्रवाई मानी जा रही है। अमेरिकी राजदूत के साथ नेपाल की शाही सेना के प्रमुख जनरल प्रज्ज्वल शमशेर राणा भी थे।

गौरतलब है कि इस खबर की ज्यादातर भारतीय बुर्जुआ अखबारों ने अनदेखी की और यदि किसी ने स्थान दिया भी तो भीतर के पन्नों पर कहीं कोने में। काठमाण्डू से प्रकाशित होने वाले नेपाली दैनिक 'कान्तिपुर' ने यह खबर विगत 28 फरवरी को छापी थी जिसमें यह भी बताया गया था कि मार्च के पहले हफ्ते में अमेरिकी रक्षा-विशेषज्ञों का एक दल काठमाण्डू आने वाला था। माओवादी विद्रोहियों का मुकाबला करने की नयी कारगर रणनीति तैयार करने में नेपाली सेना की मदद करना इस दल की यात्रा का उद्देश्य है। यह टिप्पणी लिखे जाने तक तो यह कार्रवाई पूरी भी हो चुकी होगी।

गौरतलब है कि इसके पहले अमेरिका ने नेपाली सरकार को क्रान्तिकारी संघर्ष को कुचलने के लिए सिर्फ आर्थिक मदद देने की ही पेशकश की थी लेकिन मालिनोव्स्की के अछाम दौरे के बाद अब अमेरिका अपने रक्षा-विशेषज्ञों को भी भेज रहा है और नेपाल की तुलना पेरू और अफगानिस्तान से करते हुए वहां सीधे सेना उतारने की भी भूमिका तैयार कर दी है। मालिनोव्स्की के दौरे के पहले ही अमेरिका ने नेपाल सरकार को सैनिक साजो-सामान की खरीद के लिए 20 करोड़ डालर की भारी मदद का फैसला ले लिया था। मार्च के पहले हफ्ते में इस आशय के समझौते पर दोनों पक्षों के दस्तखत भी हो गये होंगे। नेपाली सेना फिक्स्ड व्हील हेलीकाप्टर, आसानी से उतरने और उड़ान भरने वाले ट्विन ओट्टर जहाज, रात में देख सकने वाले उपकरणों से लैस हेलिकाप्टर और गाड़ियां तथा अन्य उन्नत हथियारों की खरीद में इस भारी रकम को खर्च करेगी।

मालिनोव्स्की ने अछाम-दौरे के बाद नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के छापामारों की तुलना पेरू के 'शाइनिंग पाथ' (पेरू की माओवादी कम्युनिस्ट पार्टी) और अफगानिस्तान के तालिबानों और 'अल कायदा' से की और इन्हें नेस्तनाबूद करने के अमेरिकी मकसद को एकदम खोलकर रखा। जहां तक तालिबान और अल कायदा से तुलना का सवाल है, मालिनोव्स्की महोदय भूल जाते हैं कि ये दोनों अमेरिकी साम्राज्यवाद की ही दोगली औलादें थीं जो काम सध जाने के बाद जब काबू से बाहर जाने लगीं तो अमेरिका को उन्हें ठिकाने लगाना पड़ा। इन दोनों को व्यापक ग़रीब मेहनतकश जनता का कोई समर्थन हासिल नहीं था और ये घोर जन-विरोधी धार्मिक कट्टरपंथी थे। इसके विपरीत, नेपाल के माओवादी क्रान्तिकारियों का गांव के ग़रीबों में व्यापक समर्थन-आधार है और एक बड़े क्षेत्र में उनकी समान्तर सत्ता को ही आम जनता मान्यता देती है। ये क्रान्तिकारी किसी धार्मिक कट्टरपंथी उसूलों से प्रेरित होकर नहीं बल्कि साम्राज्यवाद और सामन्तवाद की गिरफ्त से 90 फीसदी मेहनतकश जनता की मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहे हैं और पिछले छः वर्षों से संघर्ष के मैदान में डटे हुए हैं। शताब्दियों का इतिहास गवाह है कि ऐसे संघर्षों को कुछ समय के लिए दबा भले दिया जाये, नेस्तनाबूद कत्तई नहीं किया जा सकता। पेरू के क्रान्तिकारी संघर्ष का ही उदाहरण लें। वहां पार्टी अध्यक्ष गोंजालो सहित नेतृत्व के अधिकांश लोगों की गिरफ्तारी, सफाये की मुहिमों और दमन चक्र के बावजूद अमेरिकी साम्राज्यवादी और उनके देशी टट्टू पार्टी और उसके नेतृत्व में जारी संघर्ष का खात्मा नहीं कर पाये हैं। आज सत्ता का पक्ष भले ही हावी हो, पर आने वाले दिनों में न सिर्फ पेरू में, बल्कि पूरे लातिन अमेरिका में क्रान्तिकारी संघर्षों का तूफान एक बार फिर भड़क उठेगा, यह तय है। मालिनोव्स्की महोदय की खामख्याली धरी रह जायेगी, यह पक्का है।

नेपाल के क्रान्तिकारी जन-संघर्ष को भी अब उन्नत हथियारों और नरसंहारों के बूतेसमाप्त नहीं किया जा सकता। वहां की जनता अब जाग गयी है। हो सकता है, आज पूरी दुनिया में अपने पक्ष में चल रही लहर का फायदा उठाकर साम्राज्यवादी और नेपाली शासक वर्ग कुछ समय के लिए हावी हो जायें, लेकिन क्रान्ति का ज्वार फिर दूने वेग से उठेगा। और फिर यह भी तो है कि साम्राज्यवाद के पक्ष में जारी लहर की स्थिति हमेशा नहीं रहेगी। पूरी दुनिया के अलग-अलग कोनों में इसके संकेत दीख रहे हैं। भूमण्डलीकरण की नीतियों से तबाह मेहनतकश लड़ने को कमर कस रहे हैं। साम्राज्यवादियों की उद्दण्ड आक्रामक कार्रवाइयां आग में घी का काम ही कर रही हैं।

इतिहास गवाह है कि हथियारों के बड़े से बड़े जखीरे भी जनसंघर्षों के महासमुद्र में डूब जाते हैं। जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष कभी दमन के कारण तबाह नहीं होते। यदि वे तबाह होते हैं तो अपनी ही भूलों-गलतियों के चलते। चीन, वियतनाम, कोरिया, कम्बोडिया, क्यूबा में अमेरिकी साम्राज्यवादी जनता की ताकत को देख चुके हैं। अब विश्व पूंजीवाद की "जनम कुण्डली" बता रही है कि उसे एक बार फिर वैसे दिन देखने हैं और इस बार वे उसके लिए विनाशकारी भी सिद्ध हो सकते हैं।

सम्भावना इस बात की ज्यादा है कि अमेरिका नेपाल में सैनिक सहायता दे और अपने रक्षा-विशेषज्ञ तो भेजे, लेकिन खुद के सैनिक उतारने के बजाय "आतंकवाद-विरोधी अन्तरराष्ट्रीय मोर्चे" का स्वांग रचते हुए भारत को प्रत्यक्ष सैनिक हस्तक्षेप के लिए उकसाये। भारतीय शासक वर्ग के नेपाल को लेकर अपने विस्तारवादी मंसूबे रहे ही हैं। नेपाल के क्रान्तिकारियों को भी इस बात का अन्देशा रहा है और वे कहते भी रहे हैं कि नेपाली क्रान्ति को अंजाम तक पहुंचाने के लिए उन्हें अन्ततोगत्वा भारतीय सेना से भी जूझना पड़ेगा। यदि ऐसा होता है तो भारत की क्रान्तिकारी शक्तियों को भी इस बात का पुरजोर विरोध करना होगा कि भारतीय शासक साम्राज्यवादियों और नेपाली हुकूमत का पक्ष लेकर वहां की आम ग़रीब जनता पर कहर बरपा करे और वे अवश्य ही ऐसा करेंगे।

अफगानिस्तान की पृष्ठभूमि में यदि नेपाल को देखें और भारतीय विशाल बाज़ार में अमेरिकी दिलचस्पी को भी ध्यान में रखें तो स्पष्ट हो जाता है कि मध्यपूर्व के बाद अब दक्षिण एशिया अमेरिकी दिलचस्पी का, जन विद्रोहों का और पूंजीवादी विश्व के अन्तरविरोधों के विस्फोट का केन्द्र बनने जा रहा है। अमेरिकी साम्राज्यवाद का बूढ़ा हाथी तीन दशक पहले जैसे हिन्द चीन के दलदल में जा धंसा था, उससे भी कहीं बुरी तरह वह दक्षिण एशिया के दलदल में धंसेगा। उधर मध्य पूर्व में उसकी सूंड़ फंसने ही वाली है। लातिन अमेरिका के मेहनतकश भी उसके पिछवाड़े पलीता लगाने को तैयार हैं। और यह पगलाया हुआ बूढ़ा हाथी सूंड़ डोलाता एक ख़तरनाक दलदल की ओर बढ़ता जा रहा है।

अमेरिकी सरपरस्ती में भारतीय हस्ताक्षेप का विरोध...

(पेज 3 से आगे)

था।

उन्होंने इसी परिप्रेक्ष्य में 'अमेरिकी डिफेंस इंटेलिजेंस एजेंसी' के डाइरेक्टर लेफ्टिनेंट जनरल पैट्रिक एम.ह्यूज द्वारा तैयार और 5 फरवरी 1997 को 'सिनेट सेलेक्ट कमेटी आन इंटेलिजेंस' को सौंपे गये रिपोर्ट का जिक्र करते हुए कहा कि रिपोर्ट में उन खतरों और चुनौतियों की चर्चा की गयी है जिनका मुकाबला आने वाले दिनों में अमेरिका को करना पड़ सकता है। रिपोर्ट में लिखा है कि 'चीन उन गिनी-चुनी शक्तियों में से एक है जो अगले 10-20 वर्षों में राजनैतिक, आर्थिक और सैनिक क्षेत्र में अमेरिकी हितों के लिए जबर्दस्त खतरा बन सकती है।' उन्होंने कहा कि इसके साथ ही अमेरिका के लिए वामपंथ के बढ़ते खतरे भी चिन्ता का विषय बना रहा है। कम्युनिज्म का भूत उसे लगातार सता रहा है।

श्री वर्मा ने कहा कि नेपाल में माओवादियों की जनयुद्ध की शुरुआती घोषणा के बाद नेपाली राजनेताओं और अखबारों की राय थी कि ये आंदोलन बमुश्किल एक साल चलेगा। अमेरिका भी उस वक्त यही मानता था। लेकिन नेपाल में जनयुद्ध बढ़ता गया और धीरे-धीरे इसने पूरे नेपाल को अपने आगोश में ले लिया। नेपाल के कई प्रान्तों में उनकी समानान्तर सरकारें तक चलने लगीं। इससे अमेरिका की चिन्ता बढ़ती गयी। उधर नेपाल के पूर्व राजा वीरेन्द्र पर भी माओवादियों के दमन के लिए सेना के प्रयोग का भी दबाव बढ़ने लगा जिसे राजा ने मना कर दिया था। राजा वीरेन्द्र की हत्या के पीछे यह भी एक मुख्य कारण था।

उन्होंने कहा कि नेपाल की सरकार माओवादियों को माओवादी विद्रोही कहती थी। पहली बार उनके लिए "आतंकवादी" शब्द का इस्तेमाल अमेरिकी दौरे से वापस लौटे भारत के विदेश मंत्री ने की थी। उन्होंने कहा कि अमेरिका अपने इस पूरे मुहिम में भारत को अपना साझीदार बनाता रहा है। इसी संदर्भ में उन्होंने कुछ घटनाओं का भी जिक्र किया। उन्होंने कहा कि 26 सितम्बर को अमेरिका में "उभरते जनतांत्रिक देशों" की एक दावत रखी गयी थी जिसमें अमेरिकी प्रस्ताव था कि अमेरिका भारत मिलकर मेजबानी करें। उन्होंने कहा कि एक अमेरिकी राजदूत ने भारत में पद भार ग्रहण करने से पूर्व ही भारतीय चैम्बर आफ कामर्स के साथ बातचीत में कहा था कि अब अमेरिका भारत रिश्तों का फलक विस्तारित हो रहा है और अमेरिका भारत को पार्टनर के रूप में देखना चाहता है।

'इंटरनेशनल सालिडेरिटी फोरम नेपाल' से जुड़े व पत्रकार पी. क्षेत्री ने कहा कि नेपाली कहने मात्र से भारत सहित दुनिया के तमाम देशों में आम तौर पर एक चौकीदार या खानसामा का दृश्य उभरता है। नेपाली स्त्री का मतलब मुम्बई में बेचे जाने वाली स्त्री का रूप उभरता है। पर हकीकत इसके ठीक विपरीत है। उन्होंने कहा कि नेपाल में आपातकाल के दौरान भारी दमन के बावजूद माओवादियों का कुछ खास नुकसान नहीं हुआ है बल्कि उनका जनाधार और विस्तारित हो रहा है। उन्होंने कहा कि नेपाल के माओवादी भारत के जनपक्षधर शक्तियों से दोस्ताना मदद की अपेक्षा रखते हैं। नेपाल में सच्चे जनतंत्र की जो लड़ाई चल रही है वह भारतीय जनता की भी लड़ाई है। यदि यह आंदोलन कुचल दिया जाता है तो पूरी दुनिया में यह संदेश जायेगा कि अन्याय के विरुद्ध एक न्यायपूर्ण संघर्ष को – कम्युनिज्म को कुचल दिया गया। उन्होंने कहा कि माओवादी आंदोलन के साथ नेपाली जनता जिस मजबूती के साथ खड़ी है उससे एकदम साफ है कि आने वाले वर्षों में वहां का मुक्तिकामी संघर्ष विजयी होगा।

श्री क्षेत्री ने कहा कि देउबा सरकार का जनविरोधी चरित्र इसी से उजागर हो जाता है कि वो संविधान सभा के चुनाव तक से कतरा गयी है। उसने माओवादियों के लचीले रुख के बावजूद वार्ता के क्रम को भंग कर दिया और आपातकाल की घोषणा कर दी। उन्होंने कहा कि अंग्रेजों के खिलाफ कभी नेपाली, कुमाऊंनी व गढ़वाली जनता ने मिलकर मोर्चा लिया था। आज अमेरिका की सरपरस्ती में दमनकारी शासकों के खिलाफ मोर्चा लेने के लिए एक बार फिर ऐसी ही एकता की जरूरत है।

संगोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे जाने-माने साहित्यकार व कवि वीरेन डंगवाल ने कहा कि नेपाल पिछले अरसे से रक्तरंजित हालात से गुजर रहा है। नेपाल के हालात भारतीयों को भी विचलित व खिन्न करते हैं। उन्होंने कहा कि नेपाल में भारत को कतई नहीं हस्तक्षेप करना चाहिए। किसी भी देश की जनता को यह तय करने का अधिकार है कि वहां की सरकार कैसी हो। वहां बाहरी हस्तक्षेप के विरोध में हमारे भीतर से स्वर उठने चाहिए। उन्होंने कहा कि अमेरिका भारत के माध्यम से नेपाल में अपनी घुसपैठ व हस्तक्षेप बढ़ा रहा है।

संगोष्ठी में पंतनगर विश्वविद्यालय से आए बी.के.सिंह, हल्द्वानी के श्री विपिन व डा. योगेन्द्र चन्द्र ने भी अपने विचार प्रकट किये। संगोष्ठी के दूसरे सत्र में श्रोताओं ने कई महत्वपूर्ण प्रश्न व शंकाएं भी रखीं जिसका जवाब श्री आनन्द स्वरूप वर्मा ने दिया। संगोष्ठी का संचालन बिगुल के मुकुल ने किया। कार्यक्रम के शुरू और अन्त में बिगुल मजदूर दस्ता की टोली ने क्रान्तिकारी गीत 'हम मेहनत करने वाले सब एक हैं' व 'तोड़ो ये दीवारें, भर दो अब ये गहरी खाई' प्रस्तुत किये।

ट्रेड यूनियनों में जनवाद की बहाली

(पेज 6 से आगे)

अपनी जीतें हासिल कर सकेगा। ट्रेड यूनियन एक स्थायी संगठन होता है। उसका काम है मजदूर हितों की हिफाजत करना, उनकी मांगों को पूरा करना, उनकी मांगों को पूरा करने के लिए रोजमर्रा के संघर्षों में मज़दूरों को संगठित और एकताबद्ध करना, उनके सामने स्पष्ट बातें रखना और उनकी सहायता करना। ट्रेड यूनियन के जनवादी होने के लिए इन बातों पर ध्यान देना जरूरी है:

(1) कोई भी संगठन जो अपनी ऊपरी कमेटी के चुनाव करने में जनवाद के नियमों को तोड़ता हो, जनवादी नहीं हो सकता। आम चुनावों द्वारा यूनियन की कार्यकारिणी का गठन होना चाहिए और कार्यकारिणी द्वारा अपने पदाधिकारियों का चुनाव करना चाहिए। चुनाव की प्रक्रिया नीचे से ऊपर की ओर होना चाहिए। नेतृत्व परिवर्तन होते रहना चाहिए। इसकि लिए नये सदस्यों को नेतृत्व संभालने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(2) चुनाव गुप्त मतदान द्वारा होना चाहिए। चुनाव में सदस्यों को यह अधिकार होना चाहिए कि वे किसी भी उम्मीदवार का चुनाव करें, उनमें से किसी को वापस बुला लें और किसी की भी आलोचना करें। यूनियन के किसी भी सदस्य को चुनने और चुने जाने का अधिकार है।

(3) कोई भी निर्णय सामूहिक तौर पर लिया जाना चाहिए। ट्रेड यूनियन संगठन जब भी काम या संगठन चलाने के बारे में कोई बुनियादी फैसला ले, तो उस पर सदस्यों के बहुमत की स्वीकृति जरूरी होनी चाहिए।

(4) ट्रेड यूनियन के जीवन और काम सम्बंधी तमाम महत्वपूर्ण सवालों के बारे में सदस्यों की आम सभाओं में विस्तार से विचार होना चाहिए; साधारण सदस्यों के सुझावों व प्रस्तावों पर ध्यान दिया जाना चाहिए; कार्यकारिणी कमेटी को अपने सदस्यों को काम की प्रगति से अवगत कराते रहने के साथ ही उन्हें यह भी बताना चाहिए कि मज़दूरों के प्रस्तावों को किस तरह अमल में लाया जा रहा है।

(5) नेतृत्व को आम सदस्यों की आलोचना और आत्मालोचना से डरना नहीं चाहिए बल्कि इसे प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(6) यूनियन के रोजमर्रा के कामों में उसके सदस्यों को योजनापूर्वक हिस्सा लेना चाहिए। जिन समस्याओं को मज़दूरों को हल करना हो उनके आधार पर कमीशनों, केन्द्रों या दलों का निर्माण स्वयं अपनी इच्छा के आधार पर शामिल होने वाले लोगों में से होना चाहिए।

(7) छोटे या बड़े काम की अवहेलना किये बगैर, यूनियन को मानने

(पेज 9 पर जारी)

नई भरती करो!

(वोग्दानोव और गूसेव के नाम लेनिन के एक पत्र से, 11 फरवरी, 1905)

-व्ला. इ. लेनिन

सम्पादकीय टिप्पणी: भारत में सर्वहारा वर्ग की एक क्रान्तिकारी पार्टी के गठन की कोशिशों को, अपने शुरुआती दौर में, आज से क़रीब बत्तीस-तैतीस वर्षों पहले ही झटका लगा और उसके बाद बिखराव की प्रक्रिया ही मुख्य प्रवृत्ति बनी रही। इसका बुनियादी कारण विचारधारा की कमजोरी था और उसी का एक नतीजा यह भी रहा कि भारत की परिस्थितियों और क्रान्ति की रणनीति के प्रश्न पर भी क्रान्तिकरी एक राय पर नहीं पहुंच सके। गड़बड़ियां संगठनों के ढांचे और कार्यपद्धति में भी रहीं जो विचारधारा की कमजोरी से ही जन्मी थीं और जिनके कारण न तो सही बहस-मुबाहसे का माहौल बना, न ही कार्यकर्ताओं की सही शिक्षा-दीक्षा हुई। आन्दोलन में "वामपंथी" दुस्साहसवाद और अर्थवाद की प्रवृत्तियां लगातार एक या दूसरे रूपों में मौजूद रहीं।

विश्व पूंजी के चौतरफा हमले और प्रतिक्रियावाद के विश्वव्यापी उभार के मौजूदा दौर में, पिछले लगभग दस-पन्द्रह वर्षों के दौरान जो नई चीज़ सामने आई है, वह यह कि क्रान्तिकारी ढांचों के बिखराव की जारी प्रक्रिया के साथ ही ज्यादातर संगठनों के क्रान्तिकारी सार-तत्व में भी क्षरण होने लगा है जो जारी प्रक्रिया का ही एक नतीजा है और यह बात ज्यादा घातक है। संगठनों का मध्यवर्गीकरण-सा हो रहा है, नेतृत्वकारी दायरों में अवसरवाद का घुन लग गया है, आरामतलबी और नौकरशाही बढ़ गयी है और रुटीनी कवायद का बोलबाला है। ऐसे में, मुख्य काम यह बन गया है कि जिम्मेदार संगठन अपने ढांचों का क्रान्तिकारी पुनर्गठन करें, कतारों में मज़दूरों के बीच से नई भरती करें, नई भरती से आने वाले युवाओं को श्रमसाध्य जीवन बिताते हुए मेहनतक़श जनता के बीच काम करने और उनसे एकरूप हो जाने पर बल दें तथा उत्तराधिकारियों की तैयारी पर विशेष जोर दें। कहा जा सकता है कि पार्टी निर्माण और पार्टी गठन के पहलू हर समय साथ-साथ जारी अन्तर्सम्बन्धित काम होते हैं, लेकिन आज की तारीख में पार्टी-निर्माण का पहलू प्रधान है और पार्टी-गठन का पहलू इसके मातहत हो गया है।

हमें क्रान्तिकारी कतारों में नई भरती पर विशेष जोर देना होगा। मज़दूरों के बीच से – विशेषकर युवा मज़दूरों की भरती करनी होगी। युवाओं के बीच से भी भरती करनी होगी। सरकार की जो नीतियां चल रही हैं, उन्हें देखते हुए, यह तय है कि आने वाला समय तूफानी हलचल का समय होगा। उस तूफानी हलचल में क्रान्ति की हरावल शक्तियां ऊंची उड़ान तभी भर सकेंगी। इस काम में मज़दूर वर्ग का अखबार एक अहम भूमिका निभा सकता है। उसे निभाने में ही इसकी सार्थकता है।

हम लेनिन के एक पत्र का महत्वपूर्ण अंश प्रकाशित कर रहे हैं। सभी साथी इसे गौर से पढ़ें। इसमें सोचने-सीखने के लिए काफी बातें हैं यह पत्र 1905-07 की पहली रूसी क्रान्ति के ठीक पहले लिखा गया था। बोल्शेविक पार्टी तब काफी छोटी थी और बनने की ही प्रक्रिया में थी। लेनिन को आने वाले तूफानी समय का पूर्वानुमान था और मज़दूर साप्ताहिक पत्र 'व्येर्योद' के इर्द-गिर्द मज़दूरों-युवाओं को जोड़कर उनके सैकड़ों मण्डल तैयार करने पर उनका विशेष जोर था। 'व्येर्योद' बोल्शेविक साप्ताहिक अखबार था जो जेनेवा से प्रकाशित होता था और गुप्त रूप से रूस पहुंचाया जाता था। 'ईस्क्रा' अखबार उस समय मेंशेविकों के कब्जे में चला गया था और उनका मुखपत्र बन गया था।

-सम्पादक

... 'व्येर्योद' के लिए सहकर्मी चाहिए।

हमारी गिनती बहुत कम है। यदि रूस से और 2-3 लोग स्थायी तौर पर हमारे लिए लिखने वाले नहीं मिलते, तो फिर 'ईस्क्रा' से संघर्ष की बकवास करने की जरूरत नहीं है। हमें पैम्फ्लेटों और पर्चों की जरूरत है, बड़ी सख्त जरूरत है।

हमें युवा शक्तियां चाहिए। मेरी तो राय यह है कि जो लोग यह कहने की जुर्रत करते हैं कि लोग नहीं हैं, उन्हें खड़े-खड़े गोली से उड़ा दिया जाये। रूस में लोगों की कोई कमी नहीं है। बस हमें खुलकर और हिम्मत से, हिम्मत से और खुलकर, जी हां, एक बार फिर खुलकर और एक बार फिर हिम्मत से नौजवानों से डरे बिना उन्हें भरती करना चाहिए। आज हलचल का समय है। नौजवान ही – विद्यार्थी और उनसे भी बढ़कर युवा मज़दूर – सारे संघर्ष के भाग्य का फैसला करेंगे। निश्चलता की, ओहदों के सामने सिर झुकाने, आदि की अपनी पुरानी आदतों से पिंड छुड़ाइये। नौजवानों से 'व्येर्योद' वालों के सैकड़ों मंडल बनाइये और उन्हें डटकर काम करने की प्रेरणा दीजिये। नौजवानों को लेकर समिति तिगुनी बड़ी कीजिये, पांच या दस उपसमितियां बनाइये, हर ईमानदार और उत्साही व्यक्ति को उनसे संबद्ध कीजिये। हर उपसमिति को बिना किसी हीले-हुज्जत के परचे लिखने और छापने का अधिकार दीजिये (किसी ने कुछ गलती की भी, तो कोई डर नहीं: हम 'व्येर्योद' में "विनम्रता" से ठीक कर देंगे)। क्रांतिकारी पहलकदमी रखनेवाले सभी लोगों को तूफानी गति से संगठित करना और उन्हें काम में लगाना चाहिए। इस बात से मत डरिये कि वे प्रशिक्षित नहीं हैं, इस बात पर मत कंपकंपाइये कि उन्हें अनुभव नहीं है, कि वे विकसित नहीं हैं। पहली बात, यदि आप उन्हें संगठित और प्रेरित नहीं कर पायेंगे, तो वे मेंशेविकों और गपोनों के पीछे चल देंगे और अपनी उसी अनुभवहीनता से पांच गुना अधिक नुकसान कर बैठेंगे। दूसरे, अब तो घटनाएं ही उन्हें हमारी भावना में शिक्षित करेंगी। घटनाएं अभी से हर किसी को 'व्येर्योद' की ही भावना में शिक्षित कर रही हैं।

बस सैकड़ों मंडल संगठित करो, संगठित करो और संगठित करो, समिति की (सोपानक्रम की सदाशयपूर्ण बेवकूफियां एकदम पीछे हटा दो। हलचल का समय है या तो आप हर संस्तर में हर तरह के, हर किस्म के, सामाजिक-जनवादी काम के लिए नये, नौजवान, ताजे, उत्साही सैनिक संगठन तैयार करेंगे, या फिर आप "समिति" के नौकरशाहों का यश कमाकर शहीद हो जायेंगे।

मैं 'व्येर्योद' में इस बारे में लिखूंगा और कांग्रेस में भी बोलूंगा। मैं आपको विचारों के आदान-प्रदान के लिए प्रेरित करने की एक और कोशिश के तौर पर लिख रहा हूं, इस कोशिश में कि आप दर्जन भर युवा, ताजे मज़दूर (और दूसरे मंडलों को संपादक-मंडल के सीधे सम्पर्क में लायें, हालांकि ... हालांकि, सच्चे मन से कहूं, तो मुझे कोई उम्मीद नहीं कि आप ये साहसपूर्ण कामनाएं पूरी करेंगे। बस शायद इतना ही होगा कि दो महीने बाद आप मुझे तार से जवाब देने को कहेंगे कि मैं "योजना" में अमुक परिवर्तनों से सहमत हूं कि नहीं ... पहले से जवाब दिये देता हूं कि मैं सहमत हूं ...

कांग्रेस में भेंट तक।

लेनिन

पुनश्च। 'व्येर्योद' को रूस पहुंचाने के काम में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने का कार्यभार रखना चाहिए। सेंट पीटर्सबर्ग में ग्राहक बढ़ाने के लिए जोरदार प्रचार कीजिए। विद्यार्थी और खास तौर पर मज़दूर अपने पतों पर ही दसियों-सैकड़ों प्रतियां मंगायें। इन दिनों के माहौल में इससे डरना बेतुका है। सब कुछ तो पुलिस पकड़ नहीं पायेगी। आधे-तिहाई तो पहुंचेंगे ही और यही बहुत है। नौजवानों के हर मंडल को यह विचार सुझाइये और वे तो विदेश से संपर्क बनाने के अपने सैकड़ों रास्ते खोज लेंगे। 'व्येर्योद' को पत्र भेजने के लिए पते अधिक से अधिक लोगों को दीजिए।

•

नारी सभा

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस का आह्वान

(बिगुल संवाददाता)

रुद्रपुर, 8 मार्च। **अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस** पर आज यहां स्थानीय गांधी पार्क में **नारी सभा** की स्थानीय इकाई द्वारा आयोजित विचार गोष्ठी में वक्ताओं ने कहा कि समाज की आधी अबादी स्त्रियों को दोहरे शोषण का शिकार होना पड़ता है। एक तरफ घर के चूल्हे-चौकठ से लेकर कई तरह की भौतिक-मानसिक गुलामी है तो दूसरी तरफ समाज में मौजूद गरीबी, बेरोजगारी, ऊंच-नीच, अन्याय, अत्याचार को जन्म देने वाले पूंजीवादी समाज की बेड़ियां हैं। महिलाओं को इन दोनों धरातलों पर संघर्ष करना होगा। गोष्ठी में सर्वसम्मति से होण्डा के मज़दूर आन्दोलन को अपना समर्थन व्यक्त करते हुए **नारी सभा** ने क्षेत्र की सभी मेहनतकश महिलाओं से होण्डा कारखाना शिफ्टिंग और प्रबंधतंत्र के मनमानेपन के खिलाफ आगे बढ़कर शिरकत करने का आह्वान किया। वक्ताओं ने कहा कि जरूरत पड़ने पर वे गेट का भी घेराव करेंगी।

अपने विचार प्रकट करते हुए **दीपा पाण्डेय** ने कहा कि आज दो तरह के नारी संगठन काम कर रहे हैं। एक वे जो शोषक वर्गों के हितपोषक और पूंजीवादी की सुरक्षा-पंक्ति बनी हुई हैं। ये सभी पूरे प्रदेश और देश में बिखरी हुई एन.जी.ओ. ब्राण्ड अथवा नारीवादी संगठन हैं। दूसरी वे हैं जो मेहनतक़श स्त्रियों के हित में काम करती हैं, औरत की मुक्ति को सामाजिक बदलाव की लड़ाई का हिस्सा मानती हैं, जो पूंजीवादी मानवद्रोही व्यवस्था व उसकी विचारधारा की विरोधी हैं। ये इस प्रकार के संगठन ही अपने हैं। हमें ऐसे ही संगठन को मजबूत करना है।

राजेन्द्र कुमारी ने कहा कि औरतों के जनवादी अधिकारों के संघर्षों में शहीद होने वाली वीरांगनाओं ने हमें मुक्ति का जो रास्ता दिखाया है हमें उसी मार्ग पर चलना होगा तभी हम उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि दे सकते हैं।

रेनू शर्मा ने कहा कि आज घर से लेकर बाहर तक महिलाओं को अपमान झेलना पड़ता है। समाज बदलता रहा लेकिन हमारी दासता की बेड़ियां आज भी बरकरार हैं। इस पूंजीवादी लुटेरे समाज ने महिलाओं को पण्य वस्तु बना दिया है। दहेज की बलिवेदी पर जलाए जाने से लेकर यौन उत्पीड़न और तरह-तरह के जुल्मों का शिकार उन्हें होना पड़ता है। **विभा पाण्डेय** ने कहा कि पुरुष प्रधान समाज के खात्मे के बाद ही स्त्रियों को वास्तविक आज़ादी मिल सकती है। लेकिन हमारी लड़ाई पूरे पुरुष समुदाय के खिलाफ नहीं पूरे सामाजिक ढांचे के खिलाफ है।

उषा जोशी ने कहा औरतों को अपने खिलाफ होने वाले और पूरे समाज में होने वाले जुल्मों सितम के खिलाफ लड़ने के लिए अपना संगठन मजबूत करने के लिए तन-मन-धन से लग जाना होगा।

तारावती सिंह ने मेहनतकश महिलाओं का आह्वान करते हुए कहा कि उन्हें घर-चौकठ से बाहर निकल कर हर धरातल पर अपनी मुक्ति के लिए शोषणविहीन बराबरी वाले समाज की स्थापनाके संघर्षों में जुट जाना होगा।

विद्या देवी ने कहा कि किस्मत को कोसते बैठे रहने का समय अब बीत चुका है।यह रिरियाने का नहीं, संगठित होकर अन्याय के खिलाफ लड़ने और अपना हक मांगने का समय है।

बाद में अनौपचारिक बातचीत के क्रम में महिलाओं ने सामाजिक हालात के अपने-अपने अनुभवों का आदान-प्रदान किया। एकताबद्ध संकल्प के साथ गोष्ठी का समापन हो गया।

ट्रेड यूनियनों में जनवाद की बहाली

(पेज 8 से आगे)

वाले मज़दूरों के सांस्कृतिक, राजनीतिक और जीविकोपार्जन के स्तर को उन्नत करने के लिए लगातार शिक्षित करने का काम नेतृत्व को हाथ में लेना चाहिए। किसी 'छोटी सी छोटी बात' का भी यदि मज़दूर हितों से सम्बन्ध हो तो उसकी अवहेलना नहीं की जानी चाहिए।

(8) एक जनवादी यूनियन के लिए जरूरी है कि उसके सदस्यों की भर्ती स्वेच्छा से हो। यूनियनों का फण्ड माहवार चन्दे के रूप में जमा होना चाहिए। सदस्यों की खुद की मर्जी से चन्दा जमा होना चाहिए और खर्चों पर आम सदस्यों का नियन्त्रण होना चाहिए। ट्रेड यूनियन संगठन द्वारा अपने खर्चों की नियमित रिपोर्ट आम सदस्यों को दी जानी चाहिए। वे यूनियन जनवादी हो ही नहीं सकती जिसके पास मज़दूरों व आफिस कर्मचारियों के चन्दे से जमा फण्ड नहीं होता और यदि वह अपने खर्चे का हिसाब नियमित रूप से अपने सदस्यों को नहीं बताती।

कुल मिलाकर ट्रेड यूनियन जनवाद का तकाजा है कि यूनियन के सदस्य अपने संगठन में नियमित रूप से और लगातार हिस्सा लें, जिम्मेदार नेताओं और पदाधिकारियों को चुनने व बदलने की सदस्यों को पूरी आजादी हो, चन्दा जमा करने में किसी प्रकार की जबर्दस्ती न की जाए और खर्चों पर सदस्यों का नियन्त्रण हो।

एक सच्चे, जनवादी ट्रेड यूनियन के लिए जरूरी है कि यूनियन का जीवन आम मज़दूरों की जिन्दगी से घनिष्ठता से जुड़ा हो, वह जनता के लिए काम कर रहा हो तथा संगठन के ज्यादातर महत्वपूर्ण कामों को आम मज़दूर ही पूरा कर रहे हों।

ट्रेड यूनियन आन्दोलन का इतिहास सिखाता है कि प्रतिक्रियावादी संगठन और ट्रेड यूनियन में घुसे पूंजीपतियों के दलाल चाहें जितनी भी तिकड़में क्यों न कर लें, लेकिन अन्त में मज़दूर वर्ग उन्हें झाड़-बुहार कर खतम कर देता है और तमाम मज़दूरों को एकत्रित कर सभी जगहों पर ऐसी सच्ची जनवादी ट्रेड यूनियनों का जाल बिछा देता है, जो उन्हीं के द्वारा और उन्हीं के लिए चलायी जाती है।

आज एक बार फिर ट्रेड यूनियन आन्दोलन में जनवाद की बहाली का एजेण्डा सामने है। ट्रेड यूनियन नौकरशाही-फरमानशाही व जनवाद निषेध की सभी प्रवृत्तियों के खिलाफ जबर्दस्त संघर्ष चलाना और यूनियनों पर कुण्डली मार कर बैठे मठाधीशों को – मालिकों के एजेण्टों को ट्रेड यूनियन आन्दोलन से बाहर खदेड़ना होगा, यूनियनों को इनकी जकड़बन्दी से मुक्त करना होगा। इसके लिए हर स्तर पर ट्रेड यूनियन जनवाद की ब[illegible] सर्वोपरि कार्य है।

ट्रेड यूनियन में [illegible] बहाली के बाद निश्चि[illegible] के स्वस्थ और ते[illegible] रास्ता खुल ज[illegible]

–ति

कविता

सिलेसियाई बुनकरों का गीत

●हाइनरिख हाइने

[हाइनरिख हाइने को उन्नीसवीं शताब्दी में जर्मनी के महानतम कवियों में गिना जाता है। हाइने, वेयेर्त और फ्रैलिगराथ सर्वहारा वर्ग के कवियों की पहली पीढ़ी की सबसे अगली कतार के कवि थे। हाइने वैज्ञानिक समाजवाद के जन्मदाता मार्क्स और एंगेल्स के मित्र थे और तत्कालीन जर्मन मज़दूर आन्दोलन से जुड़े होने के कारण उन्हें सरकार का कोप भी काफी झेलना पड़ा था।

हाइने की कविता 'सिलेसियाई बुनकरों का गीत' जर्मनी के मज़दूरों में बहुत लोकप्रिय हुआ था। सिलेसियाई बुनकरों का विद्रोह उन्नीसवीं शताब्दी के जर्मन मज़दूर आन्दोलन की एक महत्वपूर्ण घटना थी, जिस पर मज़दूर आन्दोलन से सहानुभूति रखने वाली चित्रकार कैथी कोलवित्ज ने चित्रों की एक पूरी श्रृंखला भी तैयार की थी। -सम्पादक]

बैठे करघे के पास मुख पर निराशा का रोष
बहाते नहीं एक भी आंसू नेत्र म्लान
झेल चुके दुख बहुत, देह से क्षुधा-पीड़ित,
ओ वृद्ध जर्मनी, रहे हम बुन तेरे लिए शव-परिधान,
गूंथ रहे उसे तीन शापों के साथ।
रहे हम बुन, रहे हम बुन।

पहला शाप भगवान को, अंधे, बहरे भगवान को,
जैसे बच्चे पिता पर वैसे किया हमने उस पर विश्वास
जिस पर टिकायीं सारी आशाएं, बांधी उम्मीदें,
दिया उसने हमें धोखा, किया निर्लज्जता से हमारा उपहास
रहे हम बुन, रहे हम बुन।

दूसरा शाप अमीरों के राजा को,
हमारे दुखों से अद्भवित, बंद जिसके आंख-कान,
राजा, जो खसोटता आखिरी पाई हमारी जेबों से,
भेजता सैनिक हमें गोली से भूनने, मानो हम हों श्वान।
रहे हम बुन, रहे हम बुन।

शाप तुझे ओ झूठी पितृभूमि,
जहां हमारे लिए मात्र विपदा-अपमान,
जहां हम भूख-अभाव से पीड़ित,
वृद्ध जर्मनी, हम बुन रहे तेरे लिए शव-परिधन।
रहे हम बुन, रहे हम बुन!

बजट ने मजदूरों को पूरी तरह पूंजीपतियों के रहमो करम पर छोड़ा

(पेज 1 से आगे)

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को।

श्रम कानूनों में सुधार का फैसला लेकर जिन मजदूरों को पूरी तरह पूंजीपतियों के रहमोकरम पर छोड़ दिया गया है, उन्हीं के ऊपर अब भीषण मंहगाई का कहर बरपा करने का फैसला लिया जा चुका है। मिट्टी के तेल और रसोई गैस की कीमतों में बढ़ोतरी के साथ ही खुले बाजार की नीतियों और सार्वजनिक सेवाओं में कटौती की आम नीति के तहत बजट में जो भी घोषणाएं की गयीं हैं उनके नतीजे के तौर पर गांव-शहर की गरीब मेहनतकश आबादी तथा नौकरपेशा और स्वतंत्र रोजी-रोजगार वाले मध्यमवर्गीय तबके को आने वाले दिनों में कमरतोड़ मंहगाई का सामना करना पड़ेगा। कुटीर उद्योगों के लिए और छोटी किसानी के लिए तो यह बजट 'मौत का पैगाम' है। पहले से जारी छोटे उद्यमियों और मध्यम किसानों की सर्वहाराकरण की रफ्तार भी इससे और तेज हो जायेगी। गावों से दरबदर होने वालों की संख्या और अधिक बढ़ जाएगी। कारखाना क्षेत्रों के उजरती गुलामों की आबादी में और तेजी से बढ़ोत्तरी होगी। और श्रम कानूनों में सुधार का फैसला लेकर सरकार ने यह पहले ही सुनिश्चित कर दिया है कि थैलीशाह उनकी हड्डियों तक को पीस कर पाउडर बनाकर बाजार में बेंच सकें।

वैसे कहने को तो यशवंत सिन्हा ने कृषि क्षेत्र में 'तीसरी क्रान्ति' ("हरित क्रान्ति" और "श्वेत क्रान्ति" के बाद) का नारा दिया है। जिस तरह "हरित क्रान्ति" और "श्वेत क्रान्ति" ने सिर्फ गावों के पूंजीवादी फार्मरों और धनी किसानों को ही लाभ पंहुचाया और पूंजी की ताकत से उन्हे गरीब और मध्यम किसानों की जमीन हड़पने का मौका दिया, ठीक उसी तरह बल्कि उससे भी अधिक नग्न-निरंकुश रूप में वर्ष 2002-2003 के प्रस्तावित बजट में परम्परागत खेती में लगे पचहत्तर फीसदी से भी ज्यादा खेतिहरों को किनारे कर भारतीय कृषि को बाजार-अर्थव्यवस्था से जोड़ने की कोशिश की गई है। यूरिया के दामों में बढ़ोत्तरी तथा कृषि-बाजार-प्रबंधन एवं कृषि उत्पादों की आयात-निर्यात नीति सम्बन्धी जो फैसले लिए गये हैं उनसे छोटे और मध्यम किसान तबाह हो जायेंगे। अनाज से इतर नकदी फसलों के उत्पादन पर जोर बढ़ाने, ग्रामीण विद्युतीकरण और अन्य पूंजी-निवेश विषयक जो फैसले लिये गये हैं; वे सभी गांवों पर बाजार अर्थव्यवस्था की गिरफ्त मजबूत करने के लिए हैं जिनका लाभ केवल मुनाफे के लिए खेती और सहायक उद्यम करने वालों को होगा। गांव के गरीब और मध्यवर्गीय आबादी किसी भी तरह का लाभ उठाने की स्थिति में नहीं होगी। कृषि-ऋण सम्बन्धी नीतियों में भी धनी किसानों के लाभ को ही ध्यान में रखा गया है और सर्वोपरि तौर पर जोर इस बात पर है कि गांवों में देशी-विदेशी पूंजीपतियों के सामानों का बाजार बने, मन्दी का बोझ थोड़ा कम हो और पूंजी-निवेश के नये रास्ते निकलें ताकि श्रम को निचोड़ने की रफ्तार कुछ और बढ़ायी जा सके। बहरहाल, पूंजीवाद के अन्तर्गत छोटी किसानी का कोई भविष्य नहीं है और उसकी तबाही लाजिमी तौर पर होनी है, बजट ने इस बात को एक बार फिर साफ किया है और यह भी साफ कर दिया है कि गांवोंमें भी अब श्रम और पूंजी के दो पक्ष आमने-सामने होंगे। छोटे मिल्की किसानों को यह बात समझनी होगी और पूंजीवाद के विरूद्ध लड़ते हुए वही रास्ता चुनना होगा जिसका भविष्य हो!

बजट पेश करते हुए वित्तमंत्री केवल अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य में सुधार के लक्ष्य की और बाजारोन्मुखता की चर्चा की। अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य में यह सुधार आखिर किसके लिए है जबकि 80 फीसदी आम आदमी का स्वास्थ्य-सुधार तो क्या, जीना मुहाल हो जाये! बजट में इस बार रोजगार-सृजन की कोई बात नहीं हैं। स्वास्थ्य-सेवाओं, पीने के पानी और सुदूर ग्रमीण क्षेत्रों में शिक्षा, गांवों-शहरों में गरीबों के लिए आवास-योजना आदि पर पूरी चुप्पी है। नई आर्थिक नीतियों की हवा में "कल्याणकारी सरकार" और "समाजवाद" के रामनामी दुपट्टे एकदम से उड़कर दूर झाड़ पर जा अंटके हैं। सरकार 'पूंजीपतियों की मैनेजमेंट' के रूप में एकदम सामने खड़ी है।

कुटीर उद्योगों के मालिकों को अभी से ठेले लगाने और दिहाड़ी मजदूरों की लाइन में खड़ा होने के लिए तैयार रहना चाहिये। छोटी बचतों और भविष्य-निधि पर मिलने वाले ब्याज में कमी लाने तथा केबुल और ब्यूटी पार्लर जैसी सेवाओं पर सेवाकर लगाने से प्रभावित होने वाली बहुसंख्यक आबादी उस शहरी मध्य वर्ग की ही होगी जो रोज कुआं खोदकर पानी पीता है।

साम्राज्यवादी पूंजी के लिए पलक-पांवड़े बिछाने के साथ ही यशवन्त सिन्हा अपने बजट में यदि किसी के प्रति सबसे अधिक उदार नजर आये हैं तो वे हैं विदेशों में रहकर डालर-पौण्ड कमाने वाले भारतीय। भारत में वे पूंजी-निवेश करें, यहां की अर्थव्यवस्था का स्वास्थ्य "सुधारने" के लिए मजदूरों को निचोड़ने में सात समंदर पार बैठे भागीदार बनें, इसके लिए पूरी छूट दी गयी है। यही नहीं, वे अपना मुनाफा और चल-अचल सम्पत्ति से अर्जित हर तरह की आय विदेशी मुद्रा के रूप में विदेश ले जा सकतें हैं। साथ ही विदेशों से लाये जाने वाले सामानों पर सीमा शुल्क काफी कम कर दिया गया है और एक सीमा तक तो हटा लिया गया है। इससे पश्चिम के बाजारों में उपभोक्ता सामग्री की बिक्री बढ़ेगी, वहां की मन्दी से निजात पाने में मदद मिलेगी और भारत में उद्योगों का संकट बढ़ेगा जिसकी आड़ में विदेशी पूंजी को आमंत्रित करने का एक और अवसर और तर्क मिल जाएगा।

सार्वजनिक सम्पत्ति को कौड़ी के मोल बेचने की विनिवेश-नीति, मजदूरों को आखिरी हदों तक लूटने की छूट देने वाली नई श्रम नीति और विदेशी पूंजी के आने के रास्ते की सभी अड़चनों को दूर करने की सरकारी नीति के परिप्रेक्ष्य में यदि इस बजट का मूल्यांकन किया जाये और पिछले बारह वर्षों की यात्रा की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखा जाये, तो कहा जा सकता है कि देश आर्थिक नवउपनिवेशवाद की चौतरफा जकड़बंदी में फंस चुका है। पिछले दिनों कोरिया, मैक्सिको और अर्जेण्टीना जैसी अर्थव्यवस्था के ध्वस्त होने और व्यापक जनआंदोलन जैसी घटनाओं का सिलसिला हमारे देश में भी शुरू होना ही है। पर सवाल महज किसी भविष्यवाणी या पूर्वानुमान का नहीं है। सवाल यह है कि इस स्थिति को एक नई मजदूर क्रान्ति की तैयारी की स्थिति में कैसे बदला जा सकेगा। मेहनतकशों की क्रान्तिकारी राजनीति का रास्ता इस बात से तय होगा। ●

लेनिन के साथ दस महीने

एल्बर्ट रीस विलियम्स उन पांच अमेरिकी जनों में से एक थे जो अक्टूबर क्रान्ति के तूफानी दिनों के साक्षी थे। वे 1917 के बसंत में रूस पहुंचे। उस समय से लेकर अक्टूबर क्रान्ति तक, वे तूफान के साक्षी ही नहीं बल्कि भागीदार भी रहे। इस दौरान उन्होंने व्यापक जनता के शौर्य एवं सृजनशीलता के साथ ही बोल्शेविक योद्धाओं के जीवन को भी निकट से देखा। लम्बे समय तक वे लेनिन के साथ-साथ रहे। क्रान्ति के बाद जुलाई, 1918 तक उन्होंने दुनिया भर की प्रतिक्रियावादी ताकतों से जूझती पहली सर्वहारा सत्ता के जीवन-संघर्ष को निकट से देखा।

स्वदेश लौटकर रीस विलियम्स ने दो किताबें लिखीं – 'लेनिन: व्यक्ति और उनके कार्य' तथा 'रूसी क्रान्ति के दौरान'। ये दोनों पुस्तकें एक जिल्द में 'अक्टूबर क्रान्ति और लेनिन' नाम से राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ से प्रकाशित हो चुकी हैं।

हम रीस विलियम्स की पूर्वोक्त पहली पुस्तक का एक हिस्सा 'बिगुल' के पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

– संपादक

पिछले अंक से आगे

"आप जानना चाहते हैं विश्व का भविष्य क्या होगा?"

लेनिन ने भेंटकर्ता का प्रश्न दोहराते हुए कहा। "मैं कोई पैगम्बर नहीं हूं कि विश्व का भविष्य बताऊं। किन्तु यह बात निश्चित है कि पूंजीवादी राज्य, इंग्लैण्ड जिसका नमूना है, खत्म हो रहा है। पुरानी सामाजिक व्यवस्था नष्ट होने वाली है। युद्ध के फलस्वरूप पैदा होने वाली आर्थिक परिस्थितियां नूतन सामाजिक व्यवस्था की ओर उन्मुख हैं। मानवजाति का विकासक्रम अनिवार्यत: समाजवाद की ओर बढ़ रहा है।

"कुछ वर्ष पूर्व किसे यह विश्वास हो सकता था कि अमरीका में रेलवे का राष्ट्रीयकरण संभव है? फिर हमने अमरीकी सरकार को पूरे राज्य के हित में इस्तेमाल करने के लिए सारा खाद्यान्न भी खरीदते देखा है। राज्य के खिलाफ जो कुछ कहा जा रहा है, उससे यह विकासक्रम अवरुद्ध नहीं हुआ है। यह बात ठीक है कि त्रुटियों को दूर करने के ख्याल से नियंत्रण के नये उपाय सोचना और ढूंढना आवश्यक है। परन्तु राज्य को सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न होने से रोकने का कोई भी प्रयास व्यर्थ सिद्ध होगा। जो अनिवार्य है, वह होकर रहेगा और अपनी शक्ति से ही होगा। अंग्रेजों की कहावत है, 'पकवान कैसा है, खाने पर ही इसका पता चलता है'। आप समाजवादी पकवान के संबंध में बेशक कुछ भी क्यों न कहें, लेकिन सभी राष्ट्र इसे खा रहे हैं और अधिकाधिक खायेंगे।

"कुल मिलाकर, अनुभव से यह सिद्ध होता प्रतीत हो रहा है कि प्रत्येक मानव-समूह अपने-अपने विशिष्ट मार्ग से समाजवाद की ओर अग्रसर है। उसके अनेक संक्रमणकालीन स्वरूप और प्रकार होंगे, परन्तु वे सभी उस क्रांति के विभिन्न दौर हैं, जो एक ही लक्ष्य की ओर ले जाती है। यदि फ्रांस अथवा जर्मनी में समाजवादी शासन कायम हो जाय, तो रूस की अपेक्षा वहां उसे कायम रखना अधिक आसान होगा। इसका कारण यह है कि पश्चिम में समाजवाद को कायम रखने के लिए ढांचा, संगठन और सभी प्रकार की बौद्धिक सहायक शक्तियां एवं सामग्रियां सुलभ हैं, जो रूस में नहीं हैं।"

14 बुद्धिजीवियों के प्रति लेनिन का दृष्टिकोण

"प्रत्येक ईमानदार बोल्शेविक के पीछे उन्तालीस पाजी और साठ मूर्ख हैं।" व्यापक रूप से उद्धृत यह वाक्य किसी अन्य व्यक्ति का है, मगर इसे लेनिन का वाक्य कहकर इस उद्देश्य से इसे प्रचारित किया गया कि उन्हें एक कुलीन के नाते जन-समुदाय के प्रति विरक्त व अविश्वासी सिद्ध किया जाय। इस विचित्र आरोप के समर्थन में 15 वर्ष पुराने एक वक्तव्य को ढूंढकर निकाला गया। इस वक्तव्य में कहा गया था कि मजदूर वर्ग ने स्वयं तो केवल ट्रेड-यूनियनों की, अर्थात संगठित होने, मालिक के खिलाफ हड़ताल करने, प्रति आठ घंटे के कार्य-दिवस की मांग करने आदि की चेतना विकसित की। परन्तु मजदूरों को समाजवाद के विचार बाहर से मुख्यत: बुद्धिजीवियों से प्राप्त हुए हैं।

यह सच है कि लेनिन और सोवियत सरकार ने अपने सभी कामों और फरमानों द्वारा यह चरितार्थ किया है कि वे विद्वानों और विशेषज्ञों को बहुत महत्व देते हैं। लेनिन हर क्षेत्र में विशेषज्ञ की राय का सम्मान करते थे। वे फौजी मामलों में प्रामाणिक अधिकारियों के रूप में जनरलों, यहां तक कि जार के जनरलों, की राय लेते थे। यदि क्रान्तिकारी कार्यनीति के बारे में जर्मन नागरिक – मार्क्स-लेनिन के लिए मान्य पण्डित थे, तो वे उत्पादन-कुशलता के लिए अमरीकी नागरिक – टेलर – को अधिकारी मानते थे। वे सदैव निपुण लेखाकार, सुयोग्य इंजीनियर और प्रत्येक कार्य-क्षेत्र में विशेषज्ञ की उपयोगिता पर जोर देते थे। उनका विश्वास था कि सोवियतें ऐसा आकर्षण -केन्द्र होंगी, जिसकी ओर विश्व भर से विशेषज्ञ आकृष्ट होंगे। उनका यकीन था कि अन्य किसी व्यवस्था की तुलना में वे सोवियत प्रणाली में अपनी सृजनात्मक योग्यता के प्रयोग और विकास का अधिक विस्तृत क्षेत्र एवं अवसर पायेंगे।

यह कहा जाता है कि हैरिमैन विस्तीर्ण रेलवे के परिचालन की चिन्ता से उतना नहीं, जितना इसकी वित्तीय व्यवस्था की परेशानी से परिक्लान्त हो गये थे। सोवियत प्रणाली के अन्तर्गत उन्हें प्रशासकीय कामों से अपना ध्यान हटाकर वित्तीय व्यवस्था की ओर अपनी शक्ति न लगानी पड़ती, क्योंकि जिस प्रकार हम कांग्रेस में अपने प्रतिनिधि को राजनीतिक अधिकार सौंप देते हैं, उसी प्रकार सोवियत प्रणाली के अन्तर्गत आर्थिक अधिकार प्रधान प्रशासक को सौंप दिया जाता है। आर्थिक नियोजन के लिए रूस के विशाल साधन उसे सौंप दिये जातें हैं। इसके अतिरिक्त सोवियत प्रणाली के अन्तर्गत रूस अपने इंजीनियरों और प्रशासकों को न केवल अपनी प्रचुर सम्पदा के उपयोग पर विचार करने का अवसर प्रदान करता है, बल्कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उत्साही एवं सजग श्रमिक-शक्ति की भी व्यवस्था करता है।

पूंजीवादी प्रणाली के अन्तर्गत ऐसी स्थिति नहीं है, जहां मजदूरों की सबसे अधिक अभिरुचि अपने काम की अपेक्षा मजदूरी में होती है तथा जहां प्रबंधकों और मजदूरों के बीच लगातार संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। सोवियत प्रणाली के अन्तर्गत मनुष्यों की शक्ति उत्पादन के वितरण के प्रश्न पर झगड़े में नष्ट होने के बजाय अधिक उत्पादन के कार्य के लिए सुलभ होती है। लेनिन सोवियत व्यवस्था के महान परिणामों में यकीन करते थे, क्योंकि वह लोगों में पहलकदमी और नयी रचनात्मक शक्तियां जागृत करती है और इसके साथ ही विद्वानों और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों को मुक्त रूप में काम करने की स्वतंत्रता प्रदान करती है।

लेनिन ने सामाजिक शक्तियों का सर्वेक्षण करते हुए विभिन्न प्रकार के सभी तत्वों के महत्व का उचित मूल्यांकन किया था। क्रान्ति के पूर्व और बाद में बुद्धिजीवियों का अपना स्थान था। प्रचार और आंदोलन करने वालों के रूप में वे क्रान्ति को सफल बनाने में सहायता दे सकते हैं। और हुनर तथा प्रविधि में विशेषज्ञ होने के नाते वे क्रान्ति को स्थाई और टिकाऊ बनाने में भी सहायक हो सकते हैं।

15.अमरीकियों, पूंजीपतियों और कन्सेशनों के प्रति लेनिन का रुख

अमरीकी प्रविधिज्ञों, इंजीनियरों और प्रशासकों की लेनिन बड़ी इज्जत करते थे। वे पांच हजार ऐसे विशेषज्ञों को तत्काल अपने यहां बुलाना चाहते थे और उन्हें अधिकतम वेतन देने को तैयार थे। अमरीका के प्रति विशेष रुझान होने के कारण लगातार उनकी आलोचना होती रही। उनके शत्रु वस्तुत: द्वेष की भावना से उन्हें "वालस्ट्रीट के बैंकरों का दलाल" कहा करते थे और बहस की उत्तेजना में चरम वामपंथियों ने उनके मुंह ही पर यह आरोप लगा दिया था।

वास्तव में उनकी दृष्टि में अमरीकी पूंजीवाद किसी अन्य राष्ट्र के पूंजीवाद के समान ही बुरा था। परन्तु रूस से अमरीका बहुत दूर है। इससे सोवियत रूस के अस्तित्व के लिए कोई प्रत्यक्ष खतरा नहीं था। और वहां से वे सामग्रियां और विशेषज्ञ मिल सकते थे, जिनकी सोवियत रूस को आवश्यकता थी। लेनिन ने पूछा, क्या इस दशा में विशेष करार करना दोनों देशों के पारस्परिक हित में न होगा?

पर क्या किसी कम्युनिस्ट राज्य के लिए किसी पूंजीवादी राज्य के साथ इस प्रकार का संबंध कायम करना संभव है? क्या दोनों सामाजिक प्रणालियां साथ-साथ रह सकती हैं? फ्रांसीसी पत्रकार नोदो ने ये प्रश्न लेनिन से पूछे।

"क्यों नहीं," लेनिन ने उत्तर दिया। "हमें प्रविधिज्ञों, वैज्ञानिकों और विविध प्रकार के औद्योगिक उत्पादनों की आवश्यकता है और यह स्पष्ट है कि हम स्वयं इस देश के विराट साधनों को विकसित करने में अक्षम हैं। इन परिस्थितियों में, चाहे यह हमें जितना भी अप्रीतिकर लगे, यह स्वीकार करना होगा कि रूस में हम जिन सिद्धांतों का अनुकरण करते हैं, हमारी सीमाओं के बाहर उनका स्थान निश्चय ही राजनीतिक समझौते लेंगे। हम बड़ी ईमानदारी के साथ विदेशी ऋणों पर सूद देने का सुझाव प्रस्तुत करते हैं और यदि हम नकद सूद न अदा कर सके, तो गल्ला, तेल और दूसरे सभी प्रकार के कच्चे मालों से, जो हमारे यहां प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं, इसका भुगतान करेंगे।

"हमने मित्रराष्ट्रों के नागरिकों को इस शर्त पर जंगलों और खानों के संबंध में रियायतें देने का निर्णय किया है कि सोवियत रूस के कानूनों का सम्मान किया जायेगा। इतना ही नहीं हम रूस के पुराने साम्राज्य के कुछ प्रदेश कुछ मित्रराष्ट्रों के हवाले कर देना भी स्वीकार कर लेंगे, यद्यपि यह सच है हम प्रसन्नतापूर्वक नहीं, बल्कि चुपचाप कड़वा घूंट पीकर ऐसा करेंगे। हम जानते हैं कि अंग्रेज, जापानी और अमरीकी पूंजीपति इस प्रकार की रियायतें प्राप्त करने को बहुत इच्छुक हैं।"

"हम किसी अन्तर्राष्ट्रीय संगठन को महान उत्तरी रेल-पथ के निर्माण का काम सौंपने को भी तैयार हैं। क्या आपने इसके बारे में सुना है? यह 3,000 वार्स्ट* लम्बी रेल- लाइन होगी, जो ओनेगा झील के निकट सोरोका से शुरू होकर कोत्लास से होते हुए उराल पर्वतमाला के पार ओब नदी तक चली जायेगी। इस रेल-पथ का निर्माण करने वाली कम्पनी के कार्य-क्षेत्र के अन्तर्गत 80,00,000 हेक्टर भूमि पर फैले अछूते जंगल और सभी प्रकार के खनिजों के स्रोत हैं।

*एक वार्स्ट लगभग 2/3 मील के बराबर।

"यह राजकीय सम्पत्ति कुछ समय के लिए, संभवत: अस्सी वर्षों के लिए, पुन: प्राप्त करने के अधिकार के साथ दी जायेगी। हम इस अन्तर्राष्ट्रीय संगठन पर कोई किसी तरह की कठिन शर्तें लागू नहीं करेंगे। हमने तो केवल सोवियतों द्वारा स्वीकृत कानूनों, जैसे – आठ घंटे का कार्य-दिवस एवं मजदूरों के संगठनों का नियंत्रण – के पालन की शर्तें रखी हैं। यह सच है कि यह कम्युनिज्म से भिन्न बात है। यह बात हमारे आदर्श से बिल्कुल मेल नहीं खाती और हमें इसका भी उल्लेख कर देना चाहिए कि सोवियत पत्र-पत्रिकाओं में इस प्रश्न को लेकर बहुत गर्मागर्म वाद-विवाद हुआ है। परन्तु संक्रमणकाल में जो कुछ आवश्यक है, हमने उसे स्वीकार कर लेने का निर्णय कर लिया है।"

नोदो ने कहा, "तो क्या आप यह यकीन करते हैं कि यहां विदेशी पूंजीपतियों के लिए जो खतरे हैं – खतरे जो ऐसे प्रतीत होते हैं कि दूर नहीं हुए और यह भय है कि किसी भी समय वे बढ़ सकते हैं – उन खतरों के होते हुए भी क्या आपको भरोसा है कि पूंजीपति पर्याप्त साहस बटोरकर रूस में अपनी पूंजी लगायेंगे और उसे फिर से रूस को हड़प जाने देंगे? वे इस प्रकार का कार्य अपने देश की सशस्त्र फौजों के संरक्षण के बिना शुरू नहीं करेंगे। क्या आप इस प्रकार के कब्जे को मंजूर करेंगे?"

लेनिन ने उत्तर दिया, "यह अनावश्यक होगा, क्योंकि सोवियत सरकार करार की हर शर्त का ईमानदारी से पालन करेगी। परन्तु सभी दृष्टिकोणों पर विचार किया जा सकता है।"

जून 1919 में हुए महान मास्को आर्थिक सम्मेलन की रिपोर्टों से प्रकट होता है कि चिचेरिन और लेनिन अमरीका से आर्थिक समझौते की नीति के प्रश्न पर इंजीनियर क्रासिन के विचारों के खिलाफ, जो जर्मनी के साथ आर्थिक समझौता करने के पक्षधरों का अगुआ था, अपने तर्क प्रस्तुत करते रहे।

क्रमश:

चार राज्यों के विधानसभा-चुनावों के परिणाम और भविष्य के कुछ पूर्व-संकेत

आलोक रंजन

पिछले दिनों जिन चार राज्यों में विधानसभा चुनाव सम्पन्न हुए उनके वही नतीजे सामने आए जैसी उम्मीद थी। किसी भी चुनावी पार्टी से जनता को अब किसी भी तरह की बेहतरी की उम्मीद नहीं रही। ऐसी स्थिति में मुख्य पहलू नकारात्मक मतदान का ही हुआ करता है। यानी जनता यदि वोट डालती है तो सत्तारूढ़ दल की नीतियों को खारिज करने मात्र के लिए। हां यह जरूर होता है कि नागनाथ को खारिज करते हुए सांपनाथों में से जब चुनाव करना होता है कि एक सही विकल्प और जनता के संगठित होने के अभाव में फौरी जोड़-तोड़, जातिगत समीकरणों और लोक-लुभावन नारों की एक भूमिका बन जाती है। संसद विधानसभा के "चाल- चेहरा-चरित्र" से जनता वाकिफ है, पर चूंकि क्रांतिकारी संघर्ष की अगुवाई कर पाने वाली ताकतें कमजोर और बिखरी हुई हैं, इसलिए इस या उस विपक्षी दल पर ठप्पा लगाने की रस्म बदस्तूर जारी है।

बहरहाल, चुनावी नतीजों से यह साफ जाहिर है कि जनता ने भाजपाई-कुशासन को पूरी तरह से खारिज करने का मन बना लिया है। उसने भाजपा की आर्थिक नीतियों को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया है, हिन्दू गोट खेलने और दंगो की आग पर रोटी सेंकने की राजनीति को अस्वीकार कर दिया है तथा भांति-भांति के मौकापरस्त गठबंधन बनाकर, जोड़-तोड़ और खरीद फरोख्त के द्वारा सत्ता की सीढ़ियां चढ़ने की प्रवृत्ति के प्रति प्रकारान्तर से अपनी नफरत का इजहार कर दिया है। पंजाब में यही अकाली-भाजपा गठबंधन के साथ हुआ है और ऐसा ही मणिपुर में भी हुआ है। इस स्थिति का लाभ तीन राज्यों (उत्तरांचल, पंजाब और मणिपुर) में कांग्रेस को मिला है जबकि उत्तर प्रदेश में सीटों की दृष्टि से सपा और बसपा को भारी लाभ पंहुचने के बावजूद कोई भी सरकार बनाने की स्थिति में नहीं पंहुच पाया। नतीजतन, त्रिशंकु विधानसभा निलम्बित कर दी गयी है और राज्यपाल के सिफारिश पर केन्द्र सरकार की सहमति से राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया है। यानी अब राष्ट्रपति शासन के जरिये राज्य में केन्द्र की चलेगी। भाजपा का परोक्ष शासन जारी रहेगा और इस बीच चुनावी दल विधायकों की खरीद फरोख्त करने या किसी भी तरह का अवसरवादी गठजोड़ कायम करने की तिकड़मों में मशगूल रहेंगे।

सच पूंछे तो भाजपा को इस स्थिति का पहले से आभास हो गया था। अतिपिछड़ों को आरक्षण देने और कई तरह की हिकमतो के बावजूद जब राजनाथ सिंह भाजपा के पक्ष में हवा बनाने में नाकामयाब रहे तो फिर आखिरी हथियार के रूप में मन्दिर निर्माण के मसले को फिर से हवा देने के लिए संघ परिवार जुट गया, जिसका नतीजा आज गुजरात में भयंकर नरसंहार की विनाशलीला के रूप सामने है। भाजपा यह समझ गयी है कि केन्द्र में भी उसकी सरकार पर खतरे के बादल मंडरा रहें हैं, इसलिए धर्म के आधार पर खिंची दीवार को मजबूत बना कर दरअसल एक बार फिर वह अपने "हिन्दू वोट बैंक" को पुख्ता बनाने के लिए साम्प्रदायिक उन्माद को उभाड़ने के काम में जुट गयी है। भाजपा का धर्म संकट यह है कि फिलहाल सरकार चलाने के लिए उसे गठबंधन के अपने सहयोगियों को साथ रखना है जबकि आगे के चुनावों में वोट पाने के लिए हिन्दू कट्टरपंथ के नंगे खेल को। इसीलिए केन्द्र सरकार लगातार दोमुंहा व्यवहार कर रही है ताकि उसके मौकापरस्त सहयोगियों को भी चेहरा बचाने का बहाना रहे। भाजपा की गोद में बैठे सहयोगी दलों की मजबूरी है कि अपने बचे-खुचे वोट बैंक को बचाने के लिए उन्हे विहिप की बदमाशियों और साजिशों का विरोध करना ही है अन्यथा भाजपा से अलग उनका अपना कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाएगा और भाजपा से भी जल्दी उनका सफाया हो जाएगा। केन्द्र की सरकार और उसमें शामिल पार्टियों की यही दुविधा है। लेकिन इतना तय है कि भाजपा अन्ततोगत्वा तात्कालिक हित पर दूरगामी हित को प्राथमिकता देगी और धार्मिक कट्टरपंथी उन्माद की राजनीति ही आने वाले दिनों में उसका प्रमुख मुद्दा बना रहेगा।

उत्तर प्रदेश में पर्दे के पीछे जारी जोड़-तोड़ का खेल अपने चरम शिखर पर है। धर्मनिरपेक्षता के "मसीहा" बने मुलायम सिंह की पार्टी के पीछे गांवों के धनी किसानों के वर्ग आधार, जातिगत आधार पर संगठित मध्य जातियों का और मुसलमानों के एक हिस्से का वोट बैंक होने के साथ ही, आज पूंजीपतियों की और कुछ अपराधिक किस्म के नव वित्तपतियों की थैलियां हैं। लेकिन भाजपा की गोद से उतरने के बाद, उसका लगातार विरोध करते हुए, बसपा ने भी दलितों-मुसलमानों की एकता का नारा उछालकर सपा के मुस्लिम वोट बैंक में सेंध लगाई है। भाजपा और कांग्रेस के खिसके वोट बैंक में इन दो दलों ने बंटवारा किया है। समस्या यह है कि सपा और बसपा का गठजोड़ फिलहाल संभव नहीं। इसके पीछे केवल अतीत की राजनीतिक घटनाएं ही नहीं हैं। सवाल केवल जातिगत अन्तरविरोधों का भी नहीं है। गावों में सपा का वोट बैंक जिन कुलकों और खुशहाल मालिक किसानों के बीच है और बसपा का वोट बैंक जिस दलित सर्वहारा-अर्द्धसर्वहारा आबादी के बीच है, उनके बीच एकदम प्रत्यक्ष और तीखे अन्तरविरोध हैं। इस वजह से, यदि इनके बीच कोई समझौता तो कभी हो भी जाये तो वह अल्पकालिक ही सिद्ध होगा, चाहे इनकी बुनियादी नीतियों में भले कोई भिन्नता न हो। इस स्थिति में सपा की घात यह है कि वह बसपा के सवर्ण और मुस्लिम विधायकों को तोड़े और कांग्रेस का समर्थन ले। बसपा अपनी शर्तों पर भाजपा का समर्थन चाहती है पर इसमें उसे अपने मुस्लिम विधायकों को खोने का खतरा है। भाजपा ही ऐसा ही चाहती है। यह न हो तो भी उसकी चांदी है क्योंकि क्योंकि राष्टपति शासन में भी उसी की चली है। कांग्रेस की स्थिति वह है जो कचरे के ढेर पर लड़ते मजबूत कुत्तों से अलग खड़ी इंतजार करती कमजोर, बूढ़ी, खजुही कुतिया की होती है।

कुल मिलाकर , इन बनते- बिगड़ते समीकरणों से आम जनता की जिन्दगी और समस्याओं का कुछ भी लेना-देना नहीं है। सरकार चाहे जिसकी बने, उदारीकरण-निजीकरण की नीतियां और जनता की तबाही जारी रहेगी – इस सच्चाई को विगत दस वर्षों के दौरान केन्द्र में सरकारें चलाकर ये सभी दल साबित कर चुकें हैं। बुनियादी नीतियों पर इन सबकी आम सहमति है। सारा किस्सा कोताहल इस बात को लेकर है कि कौन दल अपनी कलाबाजियों और जादू मन्तर से मतपेटिकाओं में अपने लिए ज्यादा वोट गिराने के लिए लोगों को बहला-फुसला सकता है और किस पर देशी-विदेशी पूंजीजति अपना सरकार-रूपी 'मैनेजमेंट' सम्हालने के लिए अधिक भरोसा करते हैं। संसद-विधानसभा में इन दलों के प्रतिनिधियों का अनुपात चाहे जो भी हो, उनका चरित्र बहसबाजी के अड्डे का और सुअरबाड़े का ही रहेगा। जिस प्रकार पूंजीवाद अपने जारी संकट से नहीं उबर सकता, उसीतरह पूंजीवादी राजनीति अपनी वर्तमान पतित अवस्था से नहीं उबर सकता। ताजा उदाहरण यह है कि राजनीति के अपराधीकरण को रोकने की तमाम "चिन्ताओं" के बीच सिर्फ उत्तर प्रदेश विधानसभा का चुनाव कई अपराधियों ने लड़ा और विभिन्न पार्टियों के सौ विजयी उम्मीदवारों में से सौ की आपराधिक पृष्ठभूमि है। पूंजीवादी राजनीति आज चूंकि अपने-आप में ही एक अपराध है इसलिए संसद और विधानसभा को लाजिमी तौर पर डकैतों-तस्करों-बलात्कारियों और सड़क के गुण्डों-रंगदारों का अड्डा तो बनना ही है।

बहरहाल, विगत विधान सभा चुनावों ने एकबार फिर बुर्जुआ जनतंत्र के चुनावी खेल और चुनावी दलों के चरित्र को स्पष्ट कर दिया है। उत्तर प्रदेश में विधान सभा की त्रिशंकु स्थिति पूंजीवादी राजनीति के संकट की एक अभिव्यक्ति भी है। साथ ही, यह भी एक सच है कि फासिस्ट कट्टरपंथियों को आम जनता आज खारिज कर चुकी है और नतीजतन वे एक बार फिर अपना खूनी खेल 1990 और 1992 से भी बड़े पैमाने पर खेलने के लिए कमर कस चुके हैं। गुजरात का नरसंहार तो महज उसका पूर्वरंग है।

होण्डा पावर प्रोडक्ट्स के मज़दूर सड़कों पर ढकेले गये

व्यापक मज़दूर एकता के दम पर लड़ना होगा, और जीतना होगा!

(स्थानीय संवाददाता)

रुद्रपुर, 8 मार्च। लम्बे समय से जारी रस्साकशी के बीच आज स्थानीय होण्डा पावर प्रोडक्ट्स लि. के प्रबंधतंत्र के बड़े ही साजिशाना तरीके से यहां के समस्त मज़दूरों को कारखाने से बाहर कर दिया। कारखाने में इस वक्त श्रमिकों के लिए अघोषित तालाबन्दी हो गयी है। प्रबंधन इसे मज़दूरों के हड़ताल के रूप में दिखलाने के प्रयासों में लगा है।

उल्लेखनीय है कि होण्डा प्रबंधन कारखाने के सबसे महत्वपूर्ण एल्युमिनियम मशीन शाप सहित तमाम विभागों की यहां से ग्रेटर नोएडा शिफ्टिंग की उस नापाक योजना पर काम कर रहा है जिसके तहत भविष्य में यहां से पूरा कारखाना ही शिफ्ट कर देना है। इससे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हजारों परिवार सड़क पर आ जाएंगे। यहां का मज़दूर यूनियन **'श्रीराम होण्डा श्रमिक संगठन'** प्रबंधकों की इन कुत्सित साजिशों को समझकर लम्बे समय से संघर्षरत है। चूंकि यहां के मज़दूर अपनी जबर्दस्त एकता के लिए पूरे इलाके के लिए एक मिसाल बन चुके हैं और पूरे क्षेत्र में वे मज़दूरों-कर्मचारियों के हर प्रकार के न्यायपूर्ण संघर्षों में शिरकत करके अपनी वर्गीय पक्षधरता निभाते रहे हैं, इसलिए यहां के पूंजीपतियों और उनके चैम्बर की आंखों की किरकिरी भी बने रहे हैं।

पिछले दिनों प्रबंधकों ने अचानक विवादित विभाग के मज़दूरों का स्थानान्तरण कारखाने के ही अन्य विभागों में कर दिया और मशीनों को उठाने के लिए क्रेनें व फोर्क लिफ्टें मंगा लीं। यहां के मज़दूरों और श्रमिक संगठन ने इसका जमकर विरोध किया। प्रबंधकों ने यूनियन प्रतिनिधियों और तमाम श्रमिकों को झूठे आरोप पत्र देने शुरू कर दिये। मगर श्रमिक बगैर विचलित हुए अपना संघर्ष जारी रहे। श्रमिकों ने काम करने के साथ ही शिफ्टिंग की आशंका से गेट पर चौबीस घण्टे घेराव का कार्यक्रम भी जारी रखा। इसी दौरान विगत 6 मई को कारखाने गेट पर विशाल आम सभा का आयोजन रखा। सभा में पूरे इलाके के और गजरौला (ज्योतिबा फुले नगर) के विभिन्न ट्रेड यूनियन प्रतिनिधियों ने आपसी भाईचारा दिखलाते हुए उपस्थित रहे और अपना समर्थन व्यक्त किया। सभा में महिलाओं ने भी अपनी हिस्सेदारी निभाई।

अगले दिन प्रथम पाली के समय जब मज़दूर अपनी ड्यूटी पर जा रहे थे तब प्रबन्धन के लोगों ने अपने गार्ड वर्दीधारी गुण्डों की – जिन्हें प्रबन्धन ने दो दिन पहले ही कारखाने में भर लिया था– मदद से विवादित विभाग के समस्त 34 श्रमिकों को धक्के मारकर बाहर कर दिया। आक्रोशित अन्य श्रमिकों और यूनियन प्रतिनिधियों ने जब इसका प्रतिवाद किया तो प्रबंधकों और उक्त गार्डों ने उन्हें भी खदेड़कर गेट बन्द कर दिया। मजबूरन श्रमिकों को गेट पर ही धरने पर बैठना पड़ा। प्रबंधकों की यह साजिश थी कि वे मज़दूरों को बाहर करके मशीनों की पैकिंग कर सके। और वे वैसे ही कर रहे हैं।

उधर प्रबंधन ने न्यायालय से कारखाना परिक्षेत्र से दो सौ मीटर दायरे में धरना-प्रदर्शन पर रोक के लिए स्थगनादेश भी प्राप्त कर लिया। संगठन ने मुख्यमंत्री, राज्यपाल, आई.जी. से लेकर शासन-प्रशासन के तमाम जगहों पर पत्र भेजे हैं लेकिन कहीं से भी सहयोग नहीं मिला है। स्थानीय थाने ने प्राथमिकी तक नहीं दर्ज की है। यहां के मज़दूर अपनी जुझारू एकता और इलाकाई मज़दूर एकता के दम पर संघर्षरत हैं।

यह एक जलता हुआ सच है कि वक्ती तौर पर मज़दूर आंदोलन थोड़ा पीछे गया है और पूरी दुनिया के पूंजीपतियों की आक्रामकता काफी बढ़ गयी है। कारखानों के पलायन-बन्दी व छंटनी की पूरी दुनिया में एक नया दौर चल रहा है। मंदी के दुश्चक्र में फंसे पूंजीपति अपने संकटों का बोझ मेहनतकश अवाम पर डाल रहे हैं।

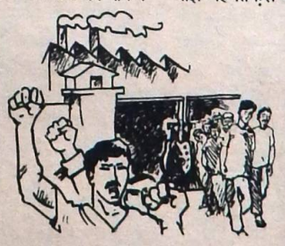

इससे भयानक बेरोजगारी बढ़ती जा रही है और पूंजीपति मनमाने कीमत पर उनका श्रम निचोड़ रहे हैं।

हो यह रहा है कि मालिक वर्ग एक जगह कारखाना लगाता है, वहां के मज़दूरों के खून-पसीने से मुनाफा लूटता है, उससे कई और कारखाने लगाता है फिर वह वहां के मजदूरों के पेट पर लात मारकर कारखाना शिफ्ट कर देता है। नयी जगह वह पुनः सस्ते श्रम निचोड़ता है, बेरोजगारी का फायदा उठाता है। यही क्रम चल रहा है। यदि इस सच्चाई को मज़दूर वर्ग समझ जाये और दूसरे भाई के पेट की कीमत पर अपनी आजीविका का मोह त्याग दे तो वह मालिकों का डटकर मुकाबला कर सकता है।

जापानी कारखाना होण्डा के मालिकान भी यही कर रहे हैं। वे चाहते हैं कि किश्तों में पूरे कारखाने को यहां से शिफ्ट कर दिया जाये। किश्तों में शिफ्ट करने से मजदूरों की औने-पौने दाम पर छुट्टी कर दी जायेगी। उधर नये क्षेत्र में सस्ते श्रम का दोहन जारी रहेगा।

होण्डा के मज़दूर मालिकों की इस कुत्सित चाल को भांप चुके हैं और इसके खिलाफ आरपार की लड़ाई का संकल्प बांधकर मैदाने जंग में उतर पड़े हैं। वे अपनी एकता बनाने के साथ ही पूरे क्षेत्र की आम जनता व मज़दूर आबादी से भी सहयोग-समर्थन जुटा रहे हैं। वे जानते हैं कि शासन-प्रशासन-न्यायालय सब पूंजीपतियों की ही हितपोषक हैं, इसलिए उन्हें इस पर बहुत भरोसा तो नहीं है लेकिन वे पूंजीवादी जनतंत्र से भी जितना लाभ उठा सकते हैं उठाने का प्रयास कर रहे हैं।

देश-दुनिया के पैमाने पर मज़दूरों की दुर्दशा जो चल रही है वो तो चल ही रही है, उत्तरांचल राज्य से तो उद्योगों के पलायन का पूरा एक क्रम सा बन गया है। होण्डा शिफ्टिंग उसी की अगली कड़ी है। इसलिए प्रदेश के मज़दूरों का भी हर हाल में यह कर्तव्य बन जाता है कि वे होण्डा श्रमिकों के आंदोलन को व्यापक मज़दूर आबादी का आन्दोलन बनाएं। तभी इस शिफ्टिंग को भी रोका जा सकता है। और अगर यह आंदोलन विजयी होता है तो पूरे राज्य में मज़दूर आंदोलनों की जीत का एक सिलसिला शुरू हो जाएगा। ●

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
सम्पादक मण्डल : डा. दूधनाथ, मुकुल। सम्पादकीय पता : 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006, सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ।